एम.ए.एच.आई.-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम

(इतिहास)

एम.ए.एच.आई. - 01 - विश्व इतिहास
(मध्यकालीन समाज एवं क्रांति का युग) - 2

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम

(इतिहास)

खण्ड-2

इकाई संख्या	पृष्ठ संख्या
इकाई 6	
यूरोप में अठारहवीं शताब्दी में कृषि व्यवस्था	5–11
इकाई 7	
अठारहवीं सदी में यूरोप में कृषक विद्रोह	12–20
इकाई 8	
नगरों व शहरों का विकास एवं यूरोप में नगरीकरण	21–28
इकाई 9	
कारखाना और श्रमजीवी वर्ग	29–37

पाठ्यक्रम विकास समिति

प्रो. बी.एस. शर्मा, कुलपति (अध्यक्ष)

प्रो. रविन्द्र कुमार
निदेशक, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं
पुस्तकालय, नई दिल्ली

प्रो. बी.आर. ग्रोवर
पूर्व निदेशक, भारतीय इतिहास
अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रो. एस.पी. गुप्ता
इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम
विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)

प्रो. जे.पी. मिश्रा
पूर्व इतिहास विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू
विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

प्रो. के.एस. गुप्ता
इतिहास विभाग, मोहन लाल सुखाड़िया
विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

डा. बृजकिशोर शर्मा
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग कोटा
खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

डा. कमलेश शर्मा
इतिहास विभाग, कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

डा. याकूब अली खान
इतिहास विभाग कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण दल

डा. एल.पी. माथुर
पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर (राज.)

डा. राजीव लोचन
इतिहास विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय
चण्डीगढ़ (भारत)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो.(डॉ.)बी.के. शर्मा**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक(**अकादमिक**)	प्रभारी अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन - Oct 2012 MAHI-01/ISBN No.-13/978-81-8496-260-4

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इकाई-6

यूरोप में अठारहवीं शताब्दी में कृषि व्यवस्था

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 अठारहवीं सदी के पहले के युग में यूरोप में कृषि व्यवस्था

6.3 खेती के प्राचीन तरीके

6.4 अठारहवीं सदी में इंग्लैंड में खेती के तरीकों में परिवर्तन के लिये जिम्मेवार परिस्थितियां

6.5 इंगलैण्ड में कृषि की नवीन पद्धति

6.6 अठारहवीं सदी में अन्य देशों में कृषि

6.7 इंगलैण्ड में नवीन कृषि का प्रभाव

6.8 निष्कर्ष

6.9 शब्दावली

6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.11 संदर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप अध्ययन करेंगे:

- कृषि का मानव के जीवन में महत्व
- अठारहवीं सदी के पहले के युग में यूरोप में कृषि व्यवस्था की विशेषताएं- सामंतवादी व्यवस्था में कृषक की दशा तथा कृषि की व्यवस्था
- कृषि के प्राचीन तरीके
- अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड में खेती के तरीकों में परिवर्तन के लिये जिम्मेदार परिस्थितियाँ
- नये आविष्कार व तरीके
- अठारहवीं सदी में यूरोप के अन्य देशों में कृषि की दशा फ्रांस व जर्मनी के कुछ भागों में इंग्लैंड की नवीन पद्धति का प्रभाव, शेष यूरोप में इसका अनुकरण न होने के कारण
- इंग्लैंड में कृषि की नवीन पद्धति के प्रभाव - कृषि उत्पादन में वृद्धि, बढती हुई जनसंख्या के लिये अन्न की व्यवस्था, उन्नीसवीं सदी में नवीन कृषि का विस्तार,पशुधन में वृद्धि, दुर्भिक्षों का अन्त, उद्योगों के लिये श्रमिकों की व्यवस्था, नकद फसलों का उत्पादन

6.1 प्रस्तावना:

प्राग-ऐतिहासिक युग में कृषि का आविष्कार मानव सभ्यता के विकास में एक क्रांतिकारी कदम था । इसने मानव को स्थायी रूप से एक स्थान पर निवास करने के लिये प्रेरित किया । प्राचीन युग में यूरोप सहित विश्व के लगभग सभी भागों में कृषि कार्य ही मनुष्य का मुख्य व्यवसाय था । बालबैंक व टेलर के मत में आधुनिक युग के आरंभ में भी यूरोप के आर्थिक जीवन में कृषि मानव का मुख्य उद्यम रहा । यद्यपि आज भी खेती अधिकांश मनुष्यों के जीवन यापनका साधन है किन्तु चार सौ साल पहले इसका महत्व आज से कहीं अधिक था।

अठारहवीं सदी में इंग्लैंड में कृषि के क्षेत्र में अनेक तकनीकी परिवर्तन हुए । इन परिवर्तनों ने कृषि उत्पाद में एक प्रकार से क्रांति ला दी । इन परिवर्तनों को समझने के लिये मध्यकालीन युग की कृषि व्यवस्था की विशेषताओं को समझना आवश्यक है ।

6.2 अठारहवीं सदी के पहले के युग में यूरोप में कृषि व्यवस्था:

मार्क ब्लाक के मत में मध्यकालीन युग में सामंतवाद का उदय परस्पर निर्भरता के सम्बन्धों के आधार पर हुआ । सुरक्षा व अजीविका के लिये किसानों ने अपनी भूमि व संसाधन स्थानीय सामंतों को सौंप दिये। स्थानीय सामन्तों ने बड़े सामन्तों से सुरक्षा का आश्वासन सैनिक सहायता के बदले में प्राप्त किया। बड़े सामन्त ने ऐसी ही शर्त पर राजा को अपने अधिकार सौंपे । सामन्तवाद के उदय और विकास के चाहे कुछ भी कारण रहे हों । इसका एक महत्वपूर्ण परिणाम कृषक का भूमि का स्वामी नहीं होना था । अत: उसमें भूमि के सुधार के प्रति उत्साह नहीं रहता था।

सामन्तवादी व्यवस्था में कृषक की दशा दासों के समान थी । वह किसी भी हालत में अपने सामन्त के चंगुल से छुटकारा नहीं पा सकता था । सामन्त के अधिकार असीमित थे । राज्य कार्यों, युद्धों, अथवा ऐश-आराम में व्यस्त रहने के कारण वे खेती की उन्नति पर ध्यान नहीं देते थे।

उस समय ग्राम (Manor) व्यवस्था इस प्रकार थी । एक मेनर में सामन्त या उप सामन्त का गढ़ होता था जिसके चारों ओर किसानों के मकान होते थे । ग्राम की परिधि में कृषि योग्य खेत होते थे । इन खेतों की सीमा निर्धारित नहीं की जाती थी क्योंकि इनमें सभी कृषक दास अपने सामन्त के लिये सामुदायिक रूप से खेती करते थे। ऐसा करते समय उन्हें सामन्त या उसके प्रतिनिधि का आदेश मानना पड़ता था । आम तौर पर गांव के खेतों को दो, तीन या चार भागों में बाँटा जाता था लेकिन अधिकतर तीन भाग किये जाते थे। एक भाग में गेहूं या राई, दूसरे में मक्का व अन्य फसलें बोई जाती थीं तथा तीसरे को हल चला कर खाली छोड़ दिया जाता था। इन खेतों के आस पास चरागाह और जंगल होते थे। चारगाहों में गाँव के सभी पशु चर सकते थे, घास के मैदानों से उनके लिये चारा प्राप्त किया जाता था तथा जंगल से लकड़ी, घरों को बनाने के लिये फूस आदि प्राप्त किये जाते थे ।

गांव में किसकी खेती की जाय और कब उसके बीज बोये जायें इसका निश्चय गाँव (Manor) की अदालत करती थी। खेतों में कार्य करने के लिये श्रमिक उपलब्ध होते थे। इस

व्यवस्था में एक किसान को व्यक्तिगत सेवाएं, वस्तु अथवा नकद धन के माध्यम से लगान अदा करना पड़ता था।

इस व्यवस्था के अनेक दोष थे। आम तौर पर एक किसान को दो या उससे अधिक स्थानों पर खेती के लिये छोटे छोटे खेत दिये जाते थे। इनमें खेती करने में उसका काफी समय नष्ट हो जाता था तथा उसे व्यय भी अधिक करना पड़ता था। कई बार अपने छोटे, छोटे खेतों की सीमाओं के बारे में उसका अपने पड़ौसी कृषक से विवाद चलता रहा था। वह भिन्न भिन्न खेतों में सिंचाई का संतोषजनक प्रबन्ध नहीं कर सकता था। इन खेतों में वह एक ही फसल पैदा कर सकता था क्योंकि सर्दियों में ये खेत चरागाहों के रूप में उपयोग में लाये जाते थे।

6.3 खेती के प्राचीन तरीके:

मध्य युग में खेती के तरीके उन्नत नहीं थे। एक किसान का मुख्य औजार था लकड़ी से बना हुआ हलका हल। फसल काटने के लिये उसके पास एक हँसली होती थी। अनाज को साफ करने के लिये उसे हवा में छोड़ा जाता था (winnowing) अथवा जमीन पर बिखेरा जाता था ताकि पशुओं को उस पर चलाया जा सके। एक टोकरी में बीज रख कर कृषक उन्हें चारों ओर बिखेरता हुआ चलता था। सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। फसलों को बदल बदल कर (Rotation of Crops) नहीं बोया जाता था, मिट्टी की जांच भी नहीं होती थी। ऐसी परिस्थितियों में कृषि उत्पादन की मात्रा कम थी ।

6.4 अठारहवीं सदी में इंगलैण्ड में खेती के तरीकों में परिवर्तन के लिये जिम्मेवार परिस्थितियाँ:

मध्य युग के अन्त में इंगलैण्ड में व्यापार की उन्नति होने लगी। इस समय औषधि विज्ञान की प्रगति के कारण मृत्यु दर घटने लगी। शिशुओं की मृत्यु दर में कमी आई। फलस्वरूप इंग्लैंड की आबादी बढ़ी लेकिन इस बढ़ती हुई जनसंख्या अपनी आवश्यकताओं के लिये वनों और चरागाहों को तेजी से साफ करके कृषि योग्य भूमि का पारिस्थितिक संतुलन बिगाड़ दिया। कृषि उत्पाद में कमी आई। दूसरी ओर मजदूरी की दर बढ़ने लगी। इन दोनों कारणों से जमींदारों को घाटा होने लगा। इस घाटे से बचने के लिये उन्होंने कृषकों से नये समझौते किये। उन्होंने कृषकों को भूमि, औजार व अन्य साधन प्रदान कर खेती के लिये भूमि देना शुरू की तथा उसके बदले में किसान से फसल का एक निश्चित भाग लेना शुरू किया। उत्तरी फ्रांस में भी इस प्रथा को अपनाया गया। इस पद्धति ने एक ओर किसानों को सामंतों की दासता से मुक्त करने का मार्ग प्रशस्त किया तो दूसरी ओर बढ़ती हुई आबादी के लिये अधिक अन्न उपजाने में मदद दी। यद्यपि सोलहवीं शताब्दी के अंत तक इंग्लैंड में कृषक दास (serfdom) की प्रथा का अन्त बहुत बाद में हुआ। उदाहरण के तौर पर 1861 में रूस के जार एलेक्जेंडर प्रथम ने इसके लिये एक कानून पास किया।

सोलहवीं व सत्रहवीं सदी में इंग्लैंड का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बढ़ गया तथा पूंजीपतियों ने गाँवों में कृषि योग्य भूमि खरीदनी शुरू की । ऐसा करने से समाज में उनका सम्मान बढ़ता था क्योंकि प्राचीन काल से ही इंग्लैंड में भूमि का स्वामी होना गौरव की बात मानी जाती थी। ये पूंजीपति कृषि से मुनाफा कमाने की सोचने लगे। पुराने ढंग से की जाने वाली खेती से ऐसा

करना संभव नहीं था। अत: वैज्ञानिक तरीकों और अधिक उन्नत औजारों की खोज की जाने लगी। क्योंकि केवल धनी लोगों के पास ही परीक्षण के लिये धन व अवकाश था, इसलिये प्रारंभिक उन्नति अधिकांशतः: समृद्ध किसानों द्वारा की गई। इस प्रकार कृषि के क्षेत्र में पूंजी के प्रयोग से कृषि क्रांति का मार्ग प्रशस्त हो गया ।

6.5 इंगलैण्ड में कृषि की नवीन पद्धति:

एनफील्ड के अनुसार उस समय हालैंड एक प्रमुख व्यापारिक व पूंजीपति देश था। वहां पर फसलों को बदल बदल कर बोने की प्रथा को प्रयोग में लाया गया था । इंग्लैंड ने हालैंड से इसे सीखा। जेथरो तलनलार्ड टाउनशेंड, बेकवेल, आर्थर यंग व कोक आदि ने वैज्ञानिक पद्धति से खेती करने के तरीकों की खोज की। तल (1664-1740) ने पंक्तियों में थोड़ी दूरी पर बीज बोने के लिये एक यंत्र बनाया। टाउनशेड (1664-1738) ने अपने खेतों में एक किस्म की फसल के बाद दूसरे किस्म की फसल बोई तथा गेहूँ, शलजम, जौ और आलू की खेती को बारी बारी से बो कर जमीन की उर्वरता बनाये रखी । आर्थर यंग (1740-1920) ने इसका प्रचार किया तथा बड़े बड़े फार्म बनाये। कोक ने पशुओं की संख्या बढ़ाने के लिये प्रयत्न किया । पशुओं की संख्या में वृद्धि होने के कारण खाद अधिक मात्रा में उपलब्ध होने लगी। अब पहले की अपेक्षा अच्छे किस्म के धातु के हल बनाये गये। इस प्रकार के हलों में इंग्लैंड का रोजरहेम हल अधिक प्रसिद्ध है। यह हल भूमि में गहरी खुदाई करता था तथा कम समय में पहले की अपेक्षा अधिक भूमि पर चलाया जा सकता था। उत्पादित अन्न की सफाई के लिये अब पहले की अपेक्षा बेहतर तरीके अपनाये गये। भूमि की गुणवता की जाँच करके उसकी क्षमता के अनुसार फसल बोई जाने लगी।

वैज्ञानिक आधार पर नवीन प्रणाली से खेती करने के लिए छोटे खेतों के स्थान पर बड़े खेत अधिक उपयुक्त थे। अतएव अब अनेक खेतों को मिला कर एक खेत बनाया गया तथा उसके चारों ओर बाड़ (Enclosure Act) लगाये गये। इंग्लैंड में 1792 से 1815 तक इसके लिये 956 बाड़ नियम (Enclosures Act) पारित किये गये। एक ओर इससे लाभ यह हुआ कि बड़े फार्मों (Farms) में कृषि उत्पादन बढ़ा तो दूसरी ओर काफी संख्या में छोटे किसानों को अपनी भूमि छोड़नी पड़ी तथा वे भूमिहीन मजदूर हो गये।

6.6 अठारहवीं सदी में अन्य देशों में कृषि:

इंग्लैंड में इस नवीन पद्धति के पालन का प्रभाव फ्रांस तथा एशिया के कुछ भागों पर साधारण रूप से पड़ा। शेष यूरोप ने काफी समय तक इन्हें नहीं अपनाया।

अठारहवीं सदी के मध्य में फ्रांस की कृषि व्यवस्था का वर्णन करते हुए हार्टवेल ने लिखा है कि उस समय भी वहां पर खेतों को केवल दो या तीन भागों में विभाजित किया जाता था। दोनों तरीकों में ग्रामों के पास चरागाह व वन छोड़े जाते थे। कृषि औजार भी पहले जैसे थे। धातु के मजबूत हलों का प्रयोग आरंभ नहीं हुआ था। थ्रेसिग (Threshin) मशीन भी काम में नहीं लाई जाती थी। क्योंकि इंग्लैंड के मुकाबले में फ्रांस में पूंजी के विकास की दर बहुत कम थी इसलिए कृषि के क्षेत्र में साधनों की उन्नति पर ध्यान नहीं दिया गया था। फ्रांस में बाह्य व्यापार पर प्रतिबंध लगाये जाते थे। अत: अनाज इधर उधर नहीं भेजा जाता था। इस समय

तक फ्रांस में आलू की खेती को पहले से अधिक महत्व दिया जाने लगा था। इसकी खेती ऐसे चरागाहों पर की जाती थी जो अठारहवीं शताब्दी में साफ किये गये थे। लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं कि फ्रांस की कृषि पर इंग्लैंड में नये तरीकों का प्रभाव बिलकुल भी नहीं पड़ा था। कुछ कृषि विशेषज्ञों जिनमें डहमेल (Duhamale) पेलेटो (Palutteo) और टुबिल्ली (Tubelly) प्रमुख थे, ने इंग्लैंड में अपनाये गये कृषि के आधुनिक तरीकों पर पुस्तकें लिखी अथवा उनका प्रचार किया। अठारहवीं शती के अन्त में फसलों की अदला बदली को उत्तरी फ्रांस के कुछ भागों में अपनाया गया था। इसी समय इन्हीं इलाकों में बड़े फार्मों पर गन्ने की खेती आरम्भ की गई। इसके कुछ समय पहले स्पेन से अच्छी नस्ल की भेड़ें मंगाई गई। इन परिवर्तनों के होते हुए भी महान क्रांति तक फ्रांस मुख्य रूप से एक कृषि प्रधान देश ही रहा जबकि इस समय तक इंग्लैंड कृषि व औद्योगिक क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति कर चुका था।

प्रशिया पर भी इंग्लैंड के नवीन प्रयोगों का फ्रांस की अपेक्षा कुछ अधिक प्रभाव पड़ा। अलबर्ट थेयर (Albert Thaer) ने 1798 (Introduction to the knowledge of English Agriculture) नामक पुस्तक लिखी। थेयर व उसके अनुयायियों ने फसलें बोने के लिये हल द्वारा भूमि की गहरी खुदाई और नवीन औजारों के प्रयोग के लिये प्रचार किया। अठारहवीं शती के अन्त के दशकों में पूर्वी जर्मनी में अच्छी नस्ल की भेड़ें लाई गई, तिलहन, अच्छी घास व बिनौले उगाये गये तथा फसलों की अदला बदली (Rotation) की प्रणाली अपनाई गई। लेकिन अठारहवीं शती के अन्त तक भी जर्मनी के अन्य इलाकों में नवीन कृषि को नहीं अपनाया गया। केवल वे फसलों को अदला बदली (Rotation) को प्रयोग में लाने लगे थे अठारहवीं सदी के अन्त में जर्मनी के पूर्वी भागों विशेषकर साइलेशिया और सेक्सनी में भी इसे आरम्भ किया गया।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि अठारहवीं सदी में कृषि के क्षेत्र में इंग्लैंड में अभूतपूर्व उन्नति हुई तथा फ्रांस व जर्मनी के कुछ भागों पर इसका प्रभाव पड़ना आरम्भ हुआ। लेकिन इस शती के अन्त तक इटली, स्पेन, रूस व पूर्वी यूरोप के अन्य देश पिछड़े ही रहे। लेंगर व उसके अन्य चार सहयोगियों ने अपनी पुस्तक (Western Civilization) की द्वितीय जिल्द में लिखा है कि वास्तव में उन्नीसवीं शती में यूरोप के अधिकांश भागों में मध्य युग की तरह ही खेती की जाती रही। इन देशों में खेती के लिये प्रयोग में लिये जाने वाले परिवर्तनों के प्रति विरोध मुख्य रूप से दो कारणों से हुआ। ये कारण थे:- कृषकों में परम्परागत तरीकों के प्रति आस्था और नवीन तरीकों का स्थानीय परिस्थितियों के प्रति अनुकूल न होना था। इसका एक अन्य कारण यह भी था कि मनुष्य के श्रम के स्थान पर मशीनों के प्रयोग को इन देशों की सरकारों ने पसन्द नहीं किया क्योंकि वे सामाजिक व सैनिक आवश्यकताओं के कारण अधिक से अधिक जनसंख्या को कृषि पर ही निर्भर रखना चाहते थे।

6.7 इंग्लैंड में नवीन कृषि का प्रभाव :

(1) **कृषि उत्पादन में वृद्धि:** अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में कृषि के इन नये तरीकों से कृषि उत्पादन में काफी वृद्धि हुई।

(2) **बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये अन्न की व्यवस्था:** इंग्लैंड की जनसंख्या लगातार बढ़ती जा रही थी। 1750 ई0 में इस देश की जनसंख्या का अनुमान 65 लाख था जो 1801 ई0 में 90 लाख, 1831 ई0 में 190 लाख और 1851 ई0 में 180 लाख हो गई। इस बढ़ती हुई जनसंख्या के किये अन्न की बढ़ी हुई उपज काम में आई। इस समय में इस जनसंख्या का एक भाग, जिसका अन्न उपजाने से कोई सम्बन्ध नहीं था अर्थात जो शहरों में रहता था और जिनमें से काफी मनुष्य औद्योगिक इकाइयों में कार्य करते थे, को अन्न देने में सुविधा हुई। लेकिन यहां यह बता देना उचित होगा कि अन्न के उत्पादन की यह वृद्धि इंग्लैंड की बढ़ती हुई आबादी के लिये पर्याप्त सिद्ध नहीं हुई।

(3) **उन्नीसवीं शताब्दी में "नवीन कृषि" का विस्तार:** उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में खेतों में रासायनिक खाद देने की पद्धति का विकास हुआ। इस प्रकार के उर्वरकों से भी उपज में वृद्धि हुई। 1834 में साईरस मैककोरमिक ने फसल काटने वाली मशीन का आविष्कार किया इसके बाद लोहे का हल, पाचा (घोड़े से खींचा जाने वाला हल), तकेदार हैरा (पटरा) जिससे हल चलाने के बाद भूमि के टुकड़े तोड़े जाते थे, आदि का आविष्कार हुआ। समय के साथ साथ कृषि में यंत्रों का प्रयोग बढ़ता गया। इन आविष्कारों ने कृषि को और उन्नत कर दिया।

(4) **पशुधन में वृद्धि:** अच्छे नस्लों की भेड़ों व गायों की संख्या में वृद्धि हुई। जड़ों वाली सब्जियों के उगाने से पशुओं का सारे साल चारा देना सम्भव हो गया। वर्ष भर ताजा मांस मिलने लगा। इसके पहले चारे की कमी के कारण सर्दी के पहले काफी पशु मारे जाते थे लेकिन अब ऐसा नहीं किया गया। दूध के उत्पादन में वृद्धि हुई।

(5) **दुभिक्षों का अंत:** तेरहवीं व चौदहवीं सदी तक इंग्लैंड में अकाल पड़ते थे। लेकिन अब इन अकालों का पड़ना बंद हो गया।

(6) **उद्योगों के लिये श्रमिकों की व्यवस्था:** चकबन्दी के कारण जो किसान बेदखल हुए थे उनमें से अधिकांश ने कारखानों में नौकरी कर ली। फलस्वरूप औद्योगिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त हुआ।

(7) **नकद फसलों का उत्पादन:** औद्योगिक क्रांति के समय इंग्लैंड में वस्त्र उद्योग का तेजी के साथ विकास हुआ। इसके लिये कपास की आवश्यकता हुई। नवीन प्रणाली से कपास की जरूरत को कुछ हद तक पूरा किया गया।

6.8 निष्कर्ष :

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि अठारहवीं शती में इंग्लैंड की कृषि के क्षेत्र में अपनाई गई नवीन पद्धति ने फ्रांस व जर्मनी के कुछ भागों को ही विशेष रूप से प्रभावित किया। पोलेंड, रूस, बाल्कन प्रदेश, आस्ट्रिया, इटली, स्पेन व पुर्तगाल आदि देशों में इसका प्रभाव काफी समय तक नहीं देखा गया। हार्टवेल के अनुसार आज भी यूरोप के पूर्वी' भागों में हमें नवीन उपकरणों व पद्धति के साथ साथ प्राचीन पद्धति व उपकरणों का प्रयोग देखने को मिलता है।

6.9 शब्दावली :

मेनर (Manor)-सामन्तवादी युग का गाँव

फार्म (Farm) - विशाल खेत

रोटेशन ऑफ क्रॉप्स (Rotation of Crops) - फसलों की अदला बदली

विनोईग (Winnowing) - आनाज को साफ करने की एक पद्धति

सर्फ (Serf) - सामंतों के अधीन कृषक दास

थ्रेसिंग (Threshing) - अनाज को साफ करने की एक पद्धति

एनक्लोजर (Enclosure) - बाड़बंदी अथवा चकबंदी

6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. अठारहवीं शताब्दी के पहले यूरोप के देशों में कृषि व्यवस्था पर प्रकाश डालिये। इस शताब्दी में इंग्लैंड में इसमें क्या सुधार किये गये ।
2. अठारहवीं सदी में इंग्लैंड में कृषि के क्षेत्र में नवीनीकरण के लिये जिम्मेवार परिस्थितियों का विश्लेषण कीजिये । इस नवीन पद्धति का इंग्लैंड तथा यूरोप के अन्य देशों पर क्या प्रभाव पड़ा ।

6.11 संदर्भ ग्रन्थ:

Books for Reference

1 Chapter by R.R. Enfield in the book

2 "Emopean Civilization" Its origin and Development', Volume V under the direction of Edward Eyre. Oxford University Press, London, 1937.

3 Chapter by R.M. Hartwell in the book 'The Cambridge Modern History Volume IX (1793 - 1830)' edited by C.W. Crawley, Cambridge University Press, London, 1965.

4 Brison D. Gooch : Europe in the Nineteenth Century, The MacMillan Company, London, 1970.

5 David Ogg: Europe in the Seventeeth Century, Hindi edition, Jaipur, 1967.

6 Carlton J.H. Hayes: Modern Europe to 1870, the MacMillan Company, New York, Sixth Print, 1960.

7 Langer, Eadie. Geanakoplos, Hexter, Pipes: Western Civilization Volume II, Harper and Row, New York, Second Edition, 1975.

8 Wallbank and Taylor: Civilization, Past and present, Volume II, Third Edition, 1975.

इकाई 7:
अठारहवीं सदी में यूरोप में कृषक विद्रोह

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 पूर्वाभास

7.2 इंग्लैंड में अठारहवीं सदी में बाड़बन्दी आन्दोलन

7.3 फ्रांस में कृषकों की दशा

7.4 जर्मनी, के राज्यों में सुधार:

7.5 आस्ट्रिया - हंगरी

7.6 रूस में विद्रोह (1703-1772)

7.7 रूस में 1773-75 का कृषक विद्रोह

7.8 यूरोप के अन्य देशों में स्थिति

7.9 सारांश

7.10 बोध प्रश्न

7.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य:

इस इकाई में आप अध्ययन करेंगे:

मध्य कालीन युग से लेकर सत्रहवीं सदी के अन्त तक सामन्तवादी व्यवस्था में सामन्तों के अधिकार व कृषकों की दशा, केवल इंग्लैंड में कृषक दास प्रथा का अन्त, चौदहवीं सदी से सत्रहवीं सदी के कृषक विद्रोहों का उल्लेख।

इंग्लैंड में बाड़बन्दी आन्दोलन

फ्रांस में महान क्रान्ति के पहले कृषकों की दशा, क्रांति के आरम्भ होने के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में सामंतों के निवास स्थानों पर किसानों के आक्रमण, 1789 से 1792 ई0 तक कृषक दासों की मुक्ति के लिये पारित किये गये अधिनियम।

जर्मनी के कुछ छोटे राज्यों में कृषक दासों की मुक्ति के आदेश तथा प्रशा में 1807 से 1817 तक कृषकों के हित में किये गये फ्रेडरिक महान के कार्य ।

आस्ट्रिया - हंगरी साम्राज्य के बोहेमिया प्रदेश में 1768 से 1775 तक विद्रोह व उनके कारण, सम्राट जोजफ के सुधार के प्रयत्नों का सामन्तों द्वारा विरोध।

रूस में किसानों का दमन, पीटर. महान के शासन काल में किसानों पर अत्याचार, अठारहवीं सदी में आरम्भ से ही रूस के पूर्वी भागों में विद्रोह, कृषकों का लगातार दमन, 1773 ई0 में पुन: पूर्वी भागों में विद्रोह तथा उसकी भयंकरता, इस विद्रोह में श्रमिकों व गैर रूसी जाति के मनुष्यों का साथ, विद्रोहों की असफलता के कारण

अन्य यूरोपीय देशों में आन्दोलनों का न होना।

7.1 पूर्वाभास:

अठारहवीं सदी के आरम्भ में यूरोप के देशों में कृषकों की दशा:

नवीं शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी तक यूरोप में सामन्तवादी व्यवस्था का जोर रहा। इस प्रथा में बड़े सामन्त व उपसामन्त उन प्रभुसत्ता जनित अधिकारों का प्रयोग करते थे जिन पर पहले राजाओं का अधिकार था। इस व्यवस्था में कृषकों की दशा अत्यन्त शोचनीय थी क्योंकि यह प्रथा कृषकों के शोषण पर आधारित थी। तेरहवीं सदी के शुरू से सामन्तवाद का ह्रास शुरू हुआ। धर्म युद्धों के प्रभाव, व्यापारिक वर्ग के उदय तथा राष्ट्रीय राज्यों के उत्थान ने सामन्तों की शक्ति कम की। सामन्तों के अत्याचारों से त्रस्त होकर इंग्लैंड में किसानों ने संगठित होकर सामन्तों का विरोध आरम्भ किया। 1348 ईस्वी में "काली मृत्यु" नामक एक महामारी के प्रकोप से यूरोप की आधी जनसंख्या मृत्यु का ग्रास बन गई। खेती में काम करने वाले किसानों व मजदूरों की भारी कमी हो गई। इंग्लैंड में कृषक दासों ने अपनी मेहनत के लिए उचित पारिश्रमिक की मांग की। किन्तु उनके आन्दोलन को दबा दिया गया। 1381 ई0 में वाट टाईलर के नेतृत्व में इंग्लैंड के हजारों किसानों ने विद्रोह किया। इसमें शिल्पियों, व कारीगरों ने भी साथ दिया। लेकिन यह विद्रोह कुचल दिया गया।

इस समय इंग्लैंड में व्यापार की उन्नति तथा पूंजी के विकास ने स्थिति में परिवर्तन ला दिया। सामन्तों ने यह उचित समझा कि वे कृषकों को भूमि, हल, बैल, बीज आदि साधन देकर उनकी उपज का एक निश्चित भाग ले लें। इस पद्धति ने किसानों की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। सोलहवीं सदी के अन्त तक इंग्लैंड में कृषक दास की प्रथा लगभग समाप्त हो गई लेकिन कृषकों की समस्याओं का पूर्ण रूप से अन्त नहीं हुआ।

इंग्लैंड के अतिरिक्त यूरोप के अन्य देशों में कृषक दास की प्रथा प्रचलित रही। स्मिरनोव और कानाकोवा नामक दो रूसी इतिहासकारों ने लिखा है कि रूस में चौदहवीं सदी में सामन्तवाद का और उत्कर्ष हुआ तथा उनके अधीन काम करने वाले कृषकों की दशा और खराब हो गई। पूर्वी यूरोप के अन्य देशों में भी कृषकों की यही दशा थी। पन्द्रहवीं सदी में जर्मनी, फ्रांस व स्पेन में कृषकों ने असफल विद्रोह किये। पन्द्रहवीं सदी में जर्मनी, फ्रांस व स्पेन में कृषकों ने असफल विद्रोह किये। पन्द्रहवीं व सोलहवीं सदी में यूरोप की जनसंख्या बढ़ने लगी। कृषि के क्षेत्र में प्राचीन तरीकों के प्रयोग के कारण अनाज के उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई। इसका प्रतिकूल प्रभाव पश्चिमी यूरोप की अपेक्षा पूर्वी देशों पर विशेष रूप से पड़ा क्योंकि खराब मानसून के फलस्वरूप पड़ने वाले अकालों के समय वहां पर यातायात व संचार की दुरव्यवस्था के कारण अन्य देशों से पर्याप्त मात्रा में अनाज शीघ्रता से नहीं मंगाया जा सकता था। पन्द्रहवीं सदी में जर्मनी, फ्रांस व स्पेन में असफल कृषक विद्रोह हुए। सत्रहवीं सदी में फ्रांस में कई विद्रोह हुए जिनमें 1675 का जैकरी विद्रोह सबसे भयंकर था इसमें फ्रांस के ब्रिटेनी प्रदेश के पच्चीस हजार कृषकों ने भाग लिया यह विद्रोह भी कुचल दिया गया। सत्रहवीं सदी के अन्त तक भी कृषक इसी प्रकार से दुःखमय जीवन व्यतीत करते रहे। इंग्लैंड को छोड़ कर सभी देशों में सामन्तों के अत्याचारों का अन्त नहीं हुआ। 1789 की फ्रांसीसी क्रांति के समय फ्रांस में किसानों को राजा, सामन्त व चर्च को कर अदा करने के लिये एक किसान को अपनी आमदनी का 80

प्रतिशत भाग देना पड़ता था। उसे सामन्तों के यहां अनेक प्रकार की बेगार करनी पड़ती थी। अन्य मामलों में भी सामन्तों के विशेषाधिकारों से वह त्रस्त था।

7.2 इंग्लैंड में अठारहवीं सदी में बाड़बन्दी आन्दोलन:

अठारहवीं सदी में इंग्लैंड में कृषि के क्षेत्र में अनेक नये प्रयोग किये गये। जेथ्रो हल (1674-1740) द्वारा बीज बोने के लिये एक यन्त्र, टाउनशैंड (1674-1738) की फसलों को बदल बदल कर बोने की पद्धति तथा पशुओं की नस्लों व संख्या बढ़ाने के लिये राबर्ट बैकवैल ने 1770 के आस पास वैज्ञानिक प्रजनन की पद्धति के पालन ने खेती के उत्पादन तथा पशुधन को बढ़ाने में उल्लेखनीय योगदान दिया। आर्थर यंग (1741-1820) नामक एक धनी किसान ने छोटे-छोटे खुले खेतों को मिला कर बड़े-बड़े कृषि फार्म बनाने का प्रचार किया।

बड़े-बड़े फार्मों के चारों और बाड़ लगाई गई। 1760 से लेकर 1815 के मध्य 956 बाड़बन्दी अधिनियम बनाये गये। जे.एल. हेमण्ड व बारबरा हेमण्ड ने लिखा है कि पिछली दो शताब्दियों में यूरोप में शायद ही ऐसा कोई परिवर्तन हुआ जो इसके समान महत्व रखता हो। एनफील्ड के मत में वस्तुत: यह आन्दोलन इंग्लैंड के व्यापारिक व औद्यौगिक विकास से सम्बंधित था। इसमें एक ग्राम को आत्मनिर्भर बनाने के स्थान पर मुनाफा कमाने की व्यवस्था को अपनाया गया। अब फार्मों में उत्पादित अनाज को बढ़ती हुई जनसंख्या वाले नगरों में भेजा जाने लगा। इसने कृषि को एक पूंजीवादी उद्योग बना दिया।

इसमें कोई संदेह नहीं कि बाड़बंदी से काफी मात्रा में बेकार पड़ी भूमि में खेती किया जाना सम्भव हो सका तथा बड़े फार्मों में नवीन पद्धति से खेती किये जाने के फलस्वरूप भी कृषि उत्पादन बढ़ा लेकिन बाड़बन्दी के कारण अनेक छोटे किसानों को भूमि छोडने के लिये बाध्य होना पड़ा। भूमि से बेदखल होकर वे रोजगार की तलाश में शहरों में चले गये।

यद्यपि हम इंग्लैंड में बाड़बन्दी के आन्दोलन को विद्रोह नहीं मान सकते किन्तु कृषि के क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था। यह कृषि के क्षेत्र में ऐसा कदम था जिसने कृषि को व्यावसायिक रूप दे दिया।

7.3 फ्रांस में कृषकों की दशा:

1675 ई0 के विद्रोह के बाद फ्रांस में महान क्रांति तक किसानों का कोई और विद्रोह नहीं हुआ और न ही उनकी दशा में कुछ सुधार हुआ। फ्रांसीसी क्रांति (1789) के समय चर्च लगभग पन्द्रह प्रतिशत, सामन्त बीस प्रतिशत, नगरों के धनी व्यक्ति तैंतीस प्रतिशत भूमि के स्वामी थे। फ्रांस की आबादी का 85 प्रतिशत भाग खेती पर निर्भर था लेकिन उसके पास केवल एक तिहाई भूमि थी। इनके पास जितनी भी भूमि होती वह उनके परिवार के भरण पोषण के लिये पर्याप्त नहीं थी । उन्हें राजा, चर्च, सामन्त आदि को कर देने पड़ते थे। आर्थर यंग ने 1787 से 1789 तक फ्रांस के ग्रामीण क्षेत्रों का भ्रमण करके लिखा था कि आम तौर पर फ्रांसीसी कृषकों का मनोबल इतना कमजोर था कि उसे ऊँचा उठाना संभव नहीं था। वे केवल जीवित रह कर ही संतुष्ट थे। जुलाई 1789 में बास्तील (Bastille) के पतन के समाचार ज्योंही फ्रांस के देहातों में पहुँचे वहाँ पर किसानों ने कुलीन वर्ग के निवासों पर आक्रमण कर दिये। इन आक्रमणों में विशेष रूप से उन दस्तावेजों को नष्ट किया गया जिनमें उनकी दासता

के साक्ष्य उपलब्ध थे। सभी कृषक विद्रोहों की भाँति इस विद्रोह में भी कृषकों का एक ही लक्ष्य था। वे दासता से मुक्त होना चाहते थे। इस प्रकार की कार्यवाही 1790 ई0 तक चलती रही।

फ्रांस की राष्ट्रीय सभा ने विशेषाधिकारों की समाप्ति के अन्तर्गत कानूनों द्वारा फ्रांस में कृषक दास की प्रथा समाप्त कर दी। पहले कानून द्वारा भू-स्वामियों के सभी व्यक्तिगत अधिकार समाप्त कर दिये गये और कृषकों को भूमि का स्वामी माना गया। दूसरे कानून में यह कहा गया कि फ्रांस में भूमि उसी तरह से स्वतन्त्र रहेगी जिस तरह से अब यहाँ रहने वाले व्यक्ति स्वतन्त्र रहेंगे। अब एक कृषक अपने खेत में मनचाहे तरीके से खेती कर सकता था तथा अपनी उपज को बेच सकता था।

यद्यपि उपर्युक्त कानूनों के अनुसार कृषक दास प्रथा का अन्त हो गया लेकिन इनसे किसानों की सम्पूर्ण आशाएं फलीफूत नहीं हुई। इन के अनुसार सामन्तों के अनेक विशेषाधिकार जैसे सांमतों का भूमि पर स्वामित्व, व्यक्तिगत अधिकार, शिकार व मछली पकड़ने के अधिकार समाप्त कर दिये गये तथा इनके बदले में किसानों को कोई मुआवजा अदा नहीं करने के आदेश दिये गये लेकिन भूमि का बकाया कराया और सामन्तों को अदा की जाने वाली अन्य बाकी देनदारियों को माफ नहीं किया गया। इनकी अदायगी करने के लिये एक किसान को लगभग बीस वर्ष का किराया अदा करना पड़ता था। अतएव किसानों में असंतोष बना रहा। 1792 व 1793 ई0 में इस प्रकार की अदायगी को माफ कर दिया गया।

इस समय भूमिहीन किसान अथवा थोड़ी सी भूमि स्वामी यह चाहते थे कि चर्च से छीनी हुई भूमि उनमें वितरित.की जाय किन्तु ऐसी भूमि को समृद्ध किसानों अथवा व्यापारियों आदि ने खरीद कर उन्हें इससे वंचित किया।

7.4 जर्मनी के राज्यों में सुधार :

अठारहवीं सदी में जर्मनी अनेक राज्यों में विभाजित था। सभी राज्यों में कृषक अपनी दशा से असंतुष्ट थे। वे कभी भी विद्रोह कर सकते थे। अत: कुछ छोटे राज्यों ने कृषक दास की प्रथा का अन्त करने के लिए कानून बनाये। 1770 व 1780 के मध्य ड्यूक आफ सेवाय ने अपने प्रदेशों में कानूनों द्वारा इसको समाप्त किया। प्रशिया, जो कि एक बड़ा राज्य था, में वहां के सम्राट फ्रेडरिक मकान ने अपने अधीन भूमि में किसानों के करों व बेगार के भार को कम किया। 1786 ई0 में उसकी मृत्यु तक इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। 1807 से लेकर 1817 ई0 तक प्रशिया में अनेक आदेश जारी किये गये जिनके अनुसार कृषक अपने सामन्त को कुछ राशि अथवा भूमि का भाग देकर भू-स्वामी बन सकता था, लेकिन ये आदेश उन किसानों पर लागू नहीं होते थे जो सदियों से एक भूमि पर खेती नहीं करते थे। अतएव इसका प्रभाव सीमित ही रहा।

7.5 आस्ट्रिया - हंगरी :

आस्ट्रिया - हंगरी के साम्राज्य में कृषकों की दशा अत्यंत शोचनीय थी। यहां तक कहा जाता है कि हंगरी व बोहेमिया में किसान पशुओं की तरह रहते थे। 1768 में बोहेमिया के किसानों ने विद्रोह किया। इसके तुरन्त बाद भी ऐसे विद्रोह होते रहे । इनका चरमोत्कर्ष 1775 के विद्रोह में देखा जा सकता है । किसानों की मुख्य शिकायतों का आधार यह था कि सामान्य

वर्षों में भी उनसे भारी कर वसूल किया जाता था और असामान्य वर्षों (1765 और 1770) के बीच जब फसलें बार बार खराब हुई तब यह बोझ असहनीय हो गया । उस समय आस्ट्रिया में मेरिया थेरिसा का शासन था तथा उसका पुत्र जोजफ रीजेन्ट की हैसियत से शासन का संचालन कर रहा था । 1771 ई0 में जोजफ ने बोहेमिया का दौरा किया । किसानों की दुर्दशा को देख कर उसने सिफारिश की कि कृषि दास प्रथा को समाप्त किया जाय । यद्यपि किसानों का बोझ हल्का करने के लिये मेरिया थेरिसा एक तदर्थ कानून बनाने के पक्ष में थी लेकिन वह इस प्रथा के संस्थागत अस्तित्व पर आक्रमण करने के लिये तैयार नहीं थी । सम्राट बनने के बाद जोजफ ने एक लम्बी योजना के तहत कृषक दास प्रथा को समाप्त करने का निर्णय लिया । उसने यह अनुभव किया कि इस प्रथा से राज्य को अधिक आय नहीं' होती थी । कुलीन वर्ग को किसान जितना लगान देते थे उसका एक अंश ही कुलीन वर्ग राज्य को देता था । 1780 ई0 के अध्यादेश के अनुसार उसने आस्ट्रिया - हंगरी में सामंती उगाही का बोझ कुछ कम किया तथा कृषि दासों को यह गारंटी दी कि वे अपनी पैतृक भूमि के उत्तराधिकारी माने जायेंगें । 1784 के अध्यादेश के अनुसार भूमि कर की दरों को समान बनाया गया तथा विशेषाधिकार के नाम पर किसी भी वर्ग को मिलने वाली कर छूट को समाप्त किया गया । इसके लिये उसने भू - संपति के सर्वेक्षण का कार्य भी आरम्भ कराया जिसमें पांच वर्ष लगे । इस अवधि में विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों ने इस अध्यादेश का इतना विरोध किया कि इसे कभी लागू नहीं किया जा सका ।

इस प्रकार सामन्तवाद के अधिकारों को समाप्त करने में जोजफ असफल रहा ।

7.6 रूस में विद्रोह (1703-1772)

रूस में कृषि दासों का दमन किया जाता था । अधिक से अधिक कार्य लेने के लिये कुलीन वर्ग अपने अधीन कृषकों को दबा कर रखते थे । 1649 ई0 में किसानों के दमन से संबन्धित सभी कानूनों को विधि संहिता में संगठित किया गया । पीटर महान (1689-1725) के शासन काल में भी यही नीति अपनाई गई । उसने बड़ी संख्या में कृषकों को कुलीनों का दास बनाया । 1703 ई0 में पीटर ने एक नयी राजधानी बनाने का कार्य आरम्भ किया । सेंट पीटर्सबर्ग के निर्माण के लिये रूस के भिन्न भिन्न भागों से किसानों को लाया गया । उनके रहने व खाने की समुचित व्यवस्था नहीं की गई । फलस्वरूप सहस्त्रों किसान मर गये । उसने सामन्तवाद को नव विजित प्रदेशों में भी लागू किया । इसी समय यूराल प्रदेश में लोह उद्योग विकसित हो रहा था । वहां पर भी बड़ी संख्या में किसानों व श्रमिकों को भेजा गया । दक्षिण व दक्षिण पूर्वी रूस में रहने वाले श्रमिकों ने करो के भार, तथा अनिवार्य सैनिक व श्रमिकों की भर्ती के अन्यायपूर्ण कार्यों के विरूद्ध विद्रोह आरम्भ किया । यह विद्रोह भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न समय में हुए । इनमें से सबसे लोकप्रिय विद्रोह अठारहवीं सदी के प्रथम दशक में अस्त्राखान वंश कीरिया और डान प्रदेशों में हुआ । 1705 ई0 में अस्त्राखान के विद्रोह ने भंयकर रूप धारण कर लिया किन्तु उसे दबा दिया गया । 1707 ई0 को डॉन में हुए विद्रोह में मुख्य रूप से किसानों ने भाग लिया । इनका नेता कोंड्राटी बुलावीन था । शीघ्र ही यह विद्रोह समस्त दक्षिण पूर्व रूस में फैल गया । बुलावीन ने गैर रूसी जातियों का सहयोग प्राप्त करने की भी

कोशिश की । जुलाई 1708 ई0 तक चलता रहा । 1709 व 1710 ई0 में इस प्रदेश में यदा कदा विद्रोह होते रहे । लेकिन पीटर ने इन विद्रोहों को दबा दिया । 1714 ई0 के एक आदेश द्वारा उसने भूमि पर सामन्तों के अधिकार को वंशोगत बना दिया । भूखमरी के कारण भूमि छोड़ कर भागने वाले कृषकों को ढूंढ कर लाने व उन्हें सजा देने का प्रबन्ध किया गया ।

इस प्रकार रूस में अठारहवीं सदी में सामन्तों को और अधिकार दिये गये ।

यद्यपि केथेरिन महान को एक प्रबुद्ध निरकुंश शासक माना जाता है लेकिन उसने कृषक दासों की भलाई के लिये कुछ नहीं किया । 1765 ई0 में सामन्तों को अधिकार दिये गये कि वे कृषकों को सजा दे सकें । उनमें असंतोष की ज्वाला फिर से भड़क उठी ।

7.7 रूस में 1773-1775 का कृषक विद्रोह:

सरकार द्वारा सामन्तों की स्थिति दृढ़ करने और कृषकों पर उनके अधिपतियों के बढ़ते हुए अत्याचारों के कारण दोनों वर्गों में कटुता और बढ़ गई । रूसी साम्राज्य के पूर्वी भाग में कृषकों के अतिरिक्त खानों व लोहे के कारखानों में काम करने वाले श्रमिक भी अपनी दशा से असंतुष्ट थे । इस क्षेत्र में गैर रूसी जातियाँ तातार, मोर डोवियन, चुवास्श (बईनऔमे) और बेशकिर के किसान भी भूमि छिन जाने के कारण सरकार के विरूद्ध हो गये थे । गरीब कोसकों (Cossack) में भी असंतोष बढ़ रहा था ।

मई 1773 ई0 में डान प्रदेश का रहने वाला थेमेलियन पुगाचोव नामक एक कोसक जो कई बार जेल में सजा भुगत चुका था, कारागृह से भाग निकला । उसने स्वयं को रूस का सम्राट घोषित किया तथा पीटर तृतीय की उपाधि धारण की । कोसकों व भूमि छोड़ कर भागे हुए कृषकों ने उसका साथ दिया । आरम्भ से ही पुगाचोव ने कृषकों को अत्याचार का मुकाबला करने के लिये उकसाया तथा उनकी दशा सुधारने के लिये प्रयत्न करने का वचन दिया । शीघ्र ही उसका साथ यूराल के श्रमिकों ने दिया । उन्होंने अपने कारखानों से बंदूकें विद्रोहियों को दी तथा काफी मात्रा में कारखानों के बाहर बन्दूकें बनाई । दिसम्बर 1773 तक ओरनबर्ग पर्म और सिम्बर्स्क के प्रदेशों में भी यह विद्रोह फैल गया तथा गैर रूसी जातियों के सदस्य भी इसमें सम्मिलित हो गये । श्रमिकों तथा गैर-रूसियों का, किसानों का साथ देने से स्थिति गम्भीर हो गई । मार्च 1774 में लातिश्चेवो (Tatishchevo) के किले पर शाही सेना ने पुन: अधिकार कर लिया । इसी समय उफा में भी विद्रोहियों की हार हुई । पुंगाचेव यूराल के पहाड़ों में चला गया । लेकिन यहाँ पर भी वह पराजित हुआ । अब वह वोल्गा के निकट के प्रदेशों की ओर मुड़ा । वहां पर उसे कृषकों व गैर रूसियों का समर्थन मिलने की आशा थी । जून 1774 में उसने कजान के शहर को जीत लिया । एक बार फिर हार कर पुगाचेव ने वोल्गा नदी को पार करके डॉन प्रदेश में पहुँचने की कोशिश की । इस बीच सेना उसका बराबर पीछा कर रही थी । पुगाचेव को गिरफ्तार किया गया तथा जनवरी 1775 में उसे तथा उसके कुछ साथियों को फांसी दी गई । उसकी गिरफ्तारी के थोड़े समय बाद विद्रोह शान्त हो गया ।

पुगाचेव की हार के निम्नांकित कारण थे :-

(1) विद्रोह में भाग लेने वाले विभिन्न तत्वों में वह एकता कायम नहीं रख सका ।

(2) विद्रोहियों के दस्ते अनेक स्थानों पर तैनात कर दिये गये थे । अतएव वे संगठित होकर नहीं लड़ सके।

(3) उनके पास शस्त्रों की कमी थी ।

(4) शाही सेना की शक्ति उनसे कहीं अधिक थी ।

(5) उसमें संगठन की क्षमता का अभाव था ।

(6) उसने अपने अनुयायियों के सामने उनकी दशा सुधारने के लिये एक कार्यक्रम की स्पष्ट रूपरेखा नहीं बनाई थी ।

परिणाम : 1773-1775 ई0 के विद्रोह के परिणाम कृषकों के लिये हितकारी सिद्ध नहीं हुए । केथरिन द्वितीय ने 1775 ई0 में एक अध्यादेश द्वारा प्रान्तों का पुनर्गठन किया । यह नई व्यवस्था पहले की अपेक्षा अधिक केन्द्रीकृत व निरंकुश बनी । रूसी साम्राज्य के सीमावर्ती प्रांतों जहां पर गैर रूसी काफी संख्या में रहते थे, सभी प्रकार की स्वायत्ता के अधिकारों को समाप्त किया गया । 1785 ई0 में सामन्तों को एक चार्टर (Charter) प्रदान किया गया । इसमें उन सब अधिकारों की पुष्टि की गई जिनका कि उस समय वे प्रयोग करते थे । उन्हें अपने संगठन बनाने का अधिकार भी दिया गया । इन संगठनों पर गवर्नरों को निरीक्षण के अधिकार दिये गये ।

अठारहवीं सदी में रूस में कृषकों ने बार बार विद्रोह किये । इसका मुख्य कारण रूस के जारों की कृषक विरोधी नीति थी । उन्होंने समय पर सामन्तों की शक्ति दृढ़ करने तथा कृषकों के दमन करने के लिये कानून बनाये । आम तौर पर अठारहवीं सदी में रूस के कृषक विद्रोह उसके पूर्वी भाग में हुए जहां लोहे की खानों व कारखानों में श्रमिक काम करते थे तथा गैर रूसी जातियां निवास करती थी । अतएव अधिकांश कृषक विद्रोहों में उपर्युक्त तत्वों ने भी भाग लिया । ये विद्रोह संगठित न होने के कारण असफल रहे । वास्तव में वे रूसी साम्राज्य की शक्ति के आगे सफल भी नहीं हो सकते थे ।

रूस में कृषकों की शोचनीय दशा उन्नीसवीं 'सदी के प्रारंभिक छः दशकों तक बनी रही । 1861 में सम्राट एलेकजेंडर द्वितीय ने रूस में एक अधिनियम द्वारा कृषक दास की प्रथा को समाप्त करने की घोषणा की । यद्यपि यह अधिनियम अपने उद्देश्य में पूर्ण रूप से सफल नहीं हुआ किन्तु फिर भी यह किसानों को सामन्तों के अन्यायों से बचाने की दशा में एक महत्वपूर्ण कदम था ।

7.8 यूरोप के अन्य देशों की स्थिति :

अठारहवीं सदी में स्पेन, पुर्तगाल व इटली में कृषकों की दशा में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ । यद्यपि वे सामन्तों के अन्यायों से पीड़ित रहे किन्तु उन्होंने सामन्त प्रथा के अन्त के लिये कोई आन्दोलन नहीं किया । बाल्कन प्रदेशों में इसी प्रकार की दशा थी । उस समय वहाँ पर तुर्की का राज्य था तथा वे पराधीनता का जीवन व्यतीत कर रहे थे । इन सभी देशों में कृषि अत्यन्त पिछड़ी हुई दशा में थी तथा वहाँ के कृषक आन्दोलन करने की स्थिति में नहीं थे । हालैण्ड, डेनमार्क व स्वेडन जो कि इंग्लैंड के निकट थे, में भी इंग्लैंड की तरह बाड़बन्दी की

गई तथा वहां पर नवीन कृषि पद्धतियों का अनुसरण किया गया । इससे वहां के किसानों की दशा कुछ हद तक सुधरी । इन देशों में भी अठारहवीं शताब्दी में कोई आन्दोलन नहीं हुआ ।

7.9 सारांश :

चौदहवीं सदी तक इंग्लैंड में सामन्तवाद का बोलबाला था तथा कृषकों की दशा शोचनीय थी । लेकिन सोलहवीं सदी तक इंग्लैंड में कृषक दास की प्रथा समाप्त हो गई । यूरोप के सभी देशों में कृषक दास की प्रथा अठारहवीं सदी के आरम्भ तक बनी रही । पन्द्रहवीं सदी में जर्मनी, फ्रांस व स्पेन तथा सत्रहवीं सदी में फ्रांस में असफल विद्रोह हुए ।

अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड में कृषि के क्षेत्र में नवीन पद्धति का विकास हुआ तथा बाड़बन्दी की गई । लेकिन हालैण्ड, फ्रांस व एशिया के कुछ भागों को छोड़ कर शेष यूरोप में खेती प्राचीन तरीकों से ही होती रही । सामन्तों के अन्याय भी यथावत बने रहे ।

फ्रांसीसी क्रांति के आरम्भ होने के बाद कृषकों ने सामन्तों के निवास स्थान पर आक्रमण करके अपनी दासता के साक्ष्यों को नष्ट किया । 1789 ई0 में राष्ट्रीय सरकार ने सामंतो से मुक्ति दिलाने के लिये दो कानून पास किये । 1792 व 1793 ई0 में भी इस दिशा में प्रयत्न किये गये ।

आस्ट्रिया - हंगरी साम्राज्य के बोहमिया प्रदेश में 1768 से 1775 तक बार बार किसानों के विद्रोह हुए यद्यपि वहां के सम्राट जोजफ ने कृषकों को कुछ रियायतें दी लेकिन विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों के विरोध के कारण उसके आदेशों को लागू नहीं किया जा सका ।

रूस के शासकों ने सामन्तों का समर्थन प्राप्त करने के लिये समय समय पर उन्हें अधिकार प्रदान किये तथा कृषकों का दमन किया। 1705 ई0 से लेकर 1775 ई0 तक रूस में कृषकों के अनेक विद्रोह हुए । इनमें से पुगाचेव के नेतृत्व में 1773-75 का विद्रोह सबसे भंयकर था । ये विद्रोह रूस के पूर्वी भागों में हुए । इन विद्रोहों में खान व कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों तथा गैर रूसी जातियों ने भाग लिया । असंगठित होने तथा विद्रोह में भाग लेने वाले तत्वों में एकता के अभाव में ये सब विद्रोह असफल रहे । इन विद्रोह के बाद भी रूस के शासकों ने दमन की प्रक्रिया जारी रखी ।

यद्यपि यूरोप के अन्य देशों में कृषकों की -स्थिति खराब थी लेकिन तहां पर कोई आन्दोलन नहीं हुए ।

7.10 बोध प्रश्न:

1 अठारहवीं सदी के आरम्भ में कृषकों की दशा का वर्णन कीजिए । इस शताब्दी में आस्ट्रिया - हंगरी में हुए कृषक आन्दोलन का विद्रोह का विवेचन कीजिए ।

2 अठारहवीं सदी में कृषकों के प्रति रूस के शासकों के दृष्टिकोण का विश्लेषण कीजिए । इस सदी में रूस में हुए कृषक विद्रोहों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए कृषक विद्रोहों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए उनकी असफलता के कारणों की विवेचना कीजिए ।

3 निम्नलिखित वाक्यों को पढ़ कर उनके, सम्मुख सही () या गलत () का निशान लगाईये:

(1) फ्रांसीसी क्रांति के आरम्भ होने के बाद कृषकों ने सामन्तों के निवास स्थानों पर आक्रमण करके उन दस्तावेजों को नष्ट किया जो उनकी दासता के साक्ष्य थे ।

(2) आस्ट्रिया का सम्राट जोजफ सामन्तवाद के अधिकारों को समाप्त करने में सफल रहा ।

(3) अठारहवीं शताब्दी में रूस में कृषकों के अनेक विद्रोह हुए ।

(4) अठारहवीं सदी में रूस के अधिकांश कृषक विद्रोह के बाद वहाँ की सरकार ने उनकी स्थिति में सुधार किया ।

7.11 संदर्भ ग्रन्थ:

1 पार्थसारथी गुप्ता (सम्पादक): यूरोप का इतिहास, द्वितीय संस्करण, 1987, नई देहली।

2 Peter Gay and R.K. Webb: Modern Europe, Harper and Row New York, 1973.

3 History of the U.S.S.R., Part I (English Translation) - From the Earliest Times to the Great October Socialist Revolution, Progress Publishers, Moscow, 1977.

4 Chapter VI and VII Written by M.P. Vyatkin and A.G. Mankow on Early Eighteenth Century and Second Half of the Eighteenth Century, Robert Briggs - Early Modern Europe, 1560-1718, Oxford University Press, 1977.

5 Edward Eyre (Director) - European Civilization - Volume V, Oxford University Press, London, 1977.

6 Montague Fordham - The European Peasantry, 1600-1914.

7 R.R. Enfield: European Agriculture since 1750.

इकाई-8:

नगरों व शहरों का विकास एवं में नगरीकरण

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 प्राचीन काल के नगरों की आबादी व बनावट

8.3 नगरों की आबादी में वृद्धि व उसके आकड़े

8.4 जनसंख्या में वृद्धि के कारण

8.5 ग्रामों से नगरों की ओर पलायन

8.6 नये नगरों का स्वरूप

8.7 परिणाम

8.8 सारांश

8.9 बोध प्रश्न

8.10 संदर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ पायेंगे कि यूरोप में नगर व शहरों का विकास कैसे हुआ । नगरीकरण की इस प्रक्रिया से ग्रामीण जीवन कैसे प्रभावित हुआ तथा नगरी करण के क्या परिणाम हुये ।

8.1 प्रस्तावना:

प्राचीन काल के नगर एवं नागरिकों द्वारा अधिकारों की प्राप्ति हेतु किये गये प्रयत्न रोम व यूनान की सभ्यता के इतिहास में अनेक नगर राज्यों का उल्लेख मिलता है । इटली व यूनान के ऐसे नगरों के अतिरिक्त रोमन साम्राज्य के विभिन्न भागों में भी नगरों के अस्तित्व के बारे में जानकारी मिलती है । उस काल में ऐसे नगर किसी राजा अथवा सामन्त के गढ़ के चारों ओर बसाये जाते थे । ये नगर ग्रामों से कुछ बड़े होते थे । तथा इनकी आबादी भी गाँवों से अधिक होती थी । अपने अधिपति के प्रति नगर के निवासियों को लगभग उन्हीं दायित्वों का पालन करना पड़ता था जो कि गाँवों में कृषक दास (Serf) करते थे । धर्म युद्धों और राष्ट्रीय राज्यों के उदय के कारण सामंतों की शक्ति क्षीण होने लगी । इस काल में वाणिज्यवाद का उदय व विस्तार भी हुआ । नागरिकों ने सामन्तों को बाध्य किया कि वह प्रत्येक परिवार से कर वसूल न करके समस्त नागरिकों से सामूहिक रूप से कर वसूल करें । उन्होंने अपने-अपने नगरों के बाजार का प्रबन्ध भी अपने हाथ में ले लिया । अपने अधिपति की अदालतों में विवादों का निपटारा कराने के स्थान पर वे अपनी बनाई गई अदालतों में मुकदमों की सुनवाई और फैसले करने लगे । ऐसे सब अधिकारों के सम्बन्ध में उन्होंने राजा अथवा सामन्त से चार्टर (Charter) प्राप्त किये । इंग्लैण्ड में व्यापारियों के संगठनों ने सामन्तों को विपुल धनराशि अदा कर ये अधिकार हस्तगत किये । फ्रांस व नीदरलैण्ड में नागरिकों के संगठनों को कम्यून

(Commune) कहते थे । इन कम्यूनों ने अपने सामन्तों के विरूद्ध सफलतापूर्वक विद्रोह किये । जर्मनी में अनेक नगरों ने मिलकर ऐसे अधिकार लिये तथा सामूहिक सुरक्षा के लिये प्रबन्ध भी किये । इस समय में कुछ प्रभावशाली पादरियों (बिशप) ने भी कुछ नगर बसाये । इन्हें बसाते समय उन्होंने नागरिकों को उनके अधिकारों के सम्बन्ध में चार्टर प्रदान किये ।

8.2 प्राचीन काल के नगरों की आबादी व बनावट:

हेज के अनुसार चौदहवीं सदी के अन्त में यूरोप के अधिकांश नगरों की आबादी अधिक नहीं होती थी । पांच हजार की आबादी वाला नगर बड़ा माना जाता था । इससे भी अधिक आबादी वाले नगर थे लेकिन उनकी संख्या अधिक नहीं थी । यहाँ तक की लंदन, पैरिस, सेविल, वेनिस, ल्यूबेक, रोम आदि जैसे बहुत बड़े नगरों की आबादी एक लाख से कम थी । यूरोपियन देशों की अधिकांश जनसंख्या नगरों की अपेक्षा ग्रामों में अधिक थी ।

उस समय के नगरों के निवासी व्यापार के साथ बागवानी व छोटे पैमाने पर कृषि करके अपना जीवन यापन करते थे । आम तौर पर एक नगर के चारों ओर मजबूत प्राचीर होती थी और अनुमति पत्र के द्वारा ही एक नगर के विभिन्न दरवाजों से शहर में प्रवेश मिलता था । नगर की चारदीवारी के अन्दर. विभिन्न प्रकार के मकान होते थे जो एक दूसरे से सटे हुए होते थे । इसमें चर्च, टाउन हाल व व्यापारिक तथा कारीगरों के संगठन की इमारतें भव्य होती थी । सड़कें चौड़ी नहीं थी । गलियाँ इतनी सकड़ी होती थी कि उनमें से घोड़ा गाड़ी आदि कठिनता से गुजरते थे । गलियों व बाजारों में पानी के निकास के लिये नालियों का प्रबन्ध नहीं होता था । प्रत्येक नगर में एक स्थानीय संस्था होती थी । रात में नगरों के दरवाजे बन्द कर लिये जाते थे । शांति व सुव्यवस्था बनाये रखने के लिये पुलिस नियुक्त की जाती थी लेकिन उनकी संख्या बहुत कम होती थी ।

8.3 नगरों की आबादी में वृद्धि व उसके आंकड़े:

चौदहवीं सदी से इन नगरों की आबादी बढ़ने लगी । समय के सत्य साथ अनेक कारणों से पहले से स्थापित नगरों की आबादी बढ़ती गई । यहां तक अनेक स्थानों में मनुष्य नगरों की चारदीवारी के बाहर भी बस गए । पन्द्रहवीं सदी के बाद के युग में यूरोप में कई अनेक नये नगर बसे तथा कुछ पुराने नगरों की समृद्धि नष्ट हो गई । लेकिन फिर भी 1830 में यूरोप में नगरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में मनुष्य अधिक संख्या में निवास करते थे । इटली व फ्रांस से उसकी कुल जनसंख्या की साठ प्रतिशत, एशिया में सत्तर प्रतिशत, स्पेन में नब्बे प्रतिशत और रूस तथा पूर्वी देशों में पचानवे प्रतिशत आबादी गांवों में रहती थी । ज्यों-ज्यों इन देशों में औद्योगिक विकास की गति में तेजी आती गई त्यों-त्यों गाँवों से मनुष्य अधिकाधिक संख्या में शहरों में आने लगे ।

मध्य युग के अन्त व आधुनिक युग में नगरों के विकास के अनेक कारण हैं । इनमें सबसे प्रमुख कारण यूरोप के सभी देशों में जनसंख्या की लगातार वृद्धि होना है । प्रोफेसर कार सांडर्स ने 1300 व 1600 ई0 में यूरोप के विभिन्न देशों की जनसंख्या के निम्नांकित आंकड़े प्रस्तुत किये है :

क्र-सं.	देश का नाम	जनसंख्या 1300 ई0	1600 ई0
1	इंगलैण्ड	चालीस लाख	पैंसठ लाख
2	फ्रांस	1 करोड़ 40 लाख	1 करोड़ साठ लाख
3	स्पेन व पुर्तगाल	साठ लाख	1 करोड़
4	जर्मनी (नीदरलैंड के साथ)	1 करोड़ 50 लाख	2 करोड़ तीस लाख
5	डेनमार्क	दस लाख	छ: लाख
6	स्वेडन	छ: लाख	-
7	नार्वे	तीन लाख	-
8	इटली	1 करोड़ ग्यारह लाख	1 करोड़ तीस लाख

इससे स्पष्ट है कि चौदहवीं से सत्रहवीं सदी में अनेक देशों की जनसंख्या में वृद्धि हुई । सत्रहवीं सदी के बाद जनसंख्या की वृद्धि की दर और बढ़ गई । ज्यों-ज्यों विभिन्न देशों में औद्योगिक विकास की गति बढ़ी त्यों-त्यों जनसंख्या की वृद्धि की दर भी बढ़ी ।

चौदहवीं सदी से यूरोप में जनसंख्या के बढ़ने के कारणों का संक्षिप्त में विश्लेषण करना आवश्यक है क्योंकि नगरीकरण में वृद्धि से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है ।

8.4 जनसंख्या में वृद्धि के कारण:

1. **परम्परागत धारणाओं का अंत:** कार साँडर्स के अनुसार मध्य युग में ईसाई समाज में शरीर की पवित्रता (Celebeoy) को एक नैतिक कर्तव्य माना जाता था क्योंकि मनुष्य के जीवन में नैतिकता का अत्यन्त महत्व था । लेकिन अनेक ईसाई संतों ने खेलीबेसी (Celebacy) पर जोर देते हुए भी यह माना था कि अधिकांश स्त्रियों व पुरुषों को शादी कर लेनी चाहिए । फिर भी कुछ मनुष्य अविवाहित ही रहते थे । पुनर्जागरण के समय से यह धारणा कमजोर पड़ती गई ।
2. **भयंकर रोगों के प्रकोप में कमी:** प्राचीन काल से ही प्लेग व हैजा भंयकर रोगों से यूरोप के देशों में बड़ी संख्या में मनुष्य मृत्यु के ग्रास बन जाते थे । अतएव मृत्यु दर अधिक थी । अनेक शिशु भी बाल्यावस्था में मर जाते थे लेकिन पन्द्रहवीं शताब्दी से औषधि विज्ञान में निरन्तर प्रगति होती गई । फलस्वरूप प्लेग व हैजा आदि का प्रकोप बहुत कम हो गया । शिशु भी अधिक संख्या में जीने लगे । इससे जन्म दर बढ़ती गई । मृत्यु दर के कम होने तथा जन्म दर के बढ़ने से आबादी में वृद्धि हुई ।
3. **दुर्भिक्षों का अन्त:** लगभग सत्रहवीं शताब्दी तक वर्षा के अभाव में फसलें खराब हो जाती थीं तथा दुर्भिक्षों के प्रकोप से काफी मनुष्य मर जाते थे । कृषि की "नवीन पद्धति" के प्रयोग से अन्न का उत्पादन बढ़ता चला गया । फलस्वरूप अकालों का प्रकोप समाप्त हो गया ।
4. **व्यापार में उन्नति:** वाणिज्यवाद के उदय व विस्तार से अन्तर्देशीय व विदेशी व्यापार में वृद्धि हुई । व्यापारिक कार्यों के लिये अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ने लगी । अब वाणिज्यवाद के समर्थकों के साथ राज्यों की सरकार भी

जनसंख्या में वृद्धि चाहने लगी । वाणिज्यवाद के विशेषज्ञों - विलियम टेंपल, डेवीनेंट आदि ने राज्यों को इस ओर कदम उठाने के लिये प्रेरित किया । अनेक राज्यों ने विवाहित व्यक्ति को करों में छूट दी तथा अविवाहित व्यक्ति पर अतिरिक्त कर लगाये । कहीं-कहीं पर बड़े परिवार वाले व्यक्ति को राज्य की तरफ से आर्थिक सहायता भी दी जाने लगी ।

5. **कृषि उत्पादन में वृद्धि:** प्राचीन व मध्य युग में यूरोप में एक नगर की समृद्धि उसके आस-पास के क्षेत्रों में अनाज के उत्पादन पर निर्भर रहती थी । यातायात की कठिनाईयों के कारण दूसरे स्थानों से अनाज नहीं लाया जा सकता था । एक ओर तो कृषि उत्पादन में वृद्धि ने अकालों को लगभग समाप्त कर दिया तो दूसरी ओर यातायात के साधनों ने यह संभव कर दिया कि दूर-दूर से अनाज मंगाया जा सके । अतएव अब नगर अपने आस-पास के क्षेत्र के अनाज के उत्पादन पर निर्भर नहीं रहा । वह अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये अनाज का प्रबन्ध कर सकता था ।
6. **सैनिक आवश्यकताएं:** यूरोप के विभिन्न देश पारस्परिक संघर्ष में लगे रहते थे । इंग्लैण्ड की पहले फ्रांस और बाद में हालैण्ड के साथ प्रतिस्पर्धा व तीस वर्षीय युद्ध (1618-1648) इसके उदाहरण हैं । फ्रांस के लुई चौदहवें (1643-1715) ने फ्रांस को युद्धों में उलझाये रखा । रूस के पीटर महान ने विस्तारवादी नीति अपनाई । इन युद्धों के लिये सैनिकों की आवश्यकता बनी रहती थी । अत: सब देश यह चाहते थे कि उनकी जनसंख्या में वृद्धि हो ताकि उन्हें अधिक सैनिक मिल सकें ।
7. **औद्योगिक विकास:** इंग्लैण्ड में औद्योगिक विकास के फलस्वरूप जनसंख्या में वृद्धि हुई । अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और उन्नीसवीं सदी में यूरोप के अन्य देशों में यह प्रक्रिया आरम्भ हो गई तथा उनकी जनसंख्या भी बढ़ती गई । अठारहवीं सदी के मध्य व उन्नीसवीं सदी के अन्त तक यूरोप की जनसंख्या में तीन गुनी वृद्धि हुई ।

8.5 ग्रामों से नगरों की ओर पलायन:

नगरीकरण की एक विशेषता गांवों से शहरों की ओर मनुष्यों का पलायन था । इंग्लैण्ड में इस प्रकार का पलायन वाणिज्य के विकास से आरम्भ हुआ, कृषि की उन्नति तथा औद्योगिक क्रांति के समय इसमें वृद्धि हुई । अन्य देशों में भी व्यापार, कृषि व उद्योग के विकास के समय इस प्रकार की प्रवृति देखने को मिलती है । मध्य युग व आधुनिक युग के आरम्भ तक यूरोप के प्रत्येक देश में नगरों की आबादी के मुकाबले में ग्रामीण क्षेत्रों की आबादी बहुत अधिक थी । 1830 इस्वी में इटली व फ्रांस में कुल जनसंख्या का साठ प्रतिशत, प्रशिया में सत्तर प्रतिशत, स्पेन में नब्बे प्रतिशत और रूस तथा पूर्वी यूरोप के देशों में 95 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में रहता था ।

1851 में इग्लैण्ड में पहली बार ग्रामों के मुकाबले में शहरों की आबादी अधिक दर्ज की गई । इस समय में यूरोप में पच्चीस नगर ऐसे थे जिनकी आबादी एक लाख के लगभग थी । इनमें से चार इग्लैण्ड तथा एक स्काटलैंड में था । इसमें लंदन की आबादी जो 1800 में एक

लाख थी 1830 में डेढ़ लाख हो गई थी । इग्लैण्ड को छोड़ कर शेष यूरोप में पैरिस, कुस्तुन्तुनिया, सेंट पीटर्सबर्ग, नेपल्स, वियना, मास्को, बर्लिन, एमस्टर्डम, डब्लिन, हेम्बर्ग, वारसा, मिलान, रोम, मेड्रिड, पेलरनों, वेनिस, लियो, बुडापेस्ट, मार्सेलिज व बार्सीलोना के नगरों की आबादी पचास हजार से लेकर तीन लाख तक थी ।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तथा बीसवीं सदी में नगरों की आबादी बढ़ती गई तथा ग्रामों की जनसंख्या में कमी आई । इस अवधि में एक ओर नगरों की आबादी बढ़ी और दूसरी तरफ काफी संख्या में भूमिहीन कृषक, कुशल कारीगर व श्रमिक गांवों से नगरों में आये ।

नगरों की आबादी में वृद्धि तथा वहाँ गांवों से मनुष्यों के लगातार आगमन का परिणाम यह हुआ कि 1914 में इग्लैण्ड में उसकी कुल जनसंख्या का 80 प्रतिशत, फ्रांस में 45 प्रतिशत से कुछ अधिक तथा जर्मनी में 60 प्रतिशत व्यक्ति शहरों में रहते थे । इस समय में रूस, पोलैण्ड व डेनमार्क में लगभग एक तिहाई जनता शहरों में रहती थी । 1850 के बाद बड़े शहरों की आबादी में विशेष रूप से तेजी के साथ वृद्धि हुई । पहले पच्चीस नगरों को बड़ा माना जाता था लेकिन 1914 में ऐसे पचास नगर थे जिनकी आबादी एक लाख से अधिक थी ।

ग्रामों से नगरों की ओर मनुष्यों के पलायन के लिये निम्नांकित परिस्थितियों जिम्मेवार थी:

1 **कृषक दासों की मुक्ति:** मध्य युग में जमींदारों ने कृषि में होने वाले घाटे से बचने के लिये यह उचित समझा कि वे कृषकों को हल, बैल आदि साधन दे कर तथा उनसे फसल के एक निश्चित भाग लेकर भूमि काश्त के लिये दे दें । इस पद्धति से एक ओर तो जमींदार संभावित नुकसान से बच गये तथा दूसरी ओर किसान जमींदार के प्रति अन्य दायित्वों से मुक्त हो गये । फलस्वरूप इग्लैण्ड में धीरे-धीरे कृषक मुक्त हो गये। सोलहवीं सदी तक वहां पर कृषक दास (Serfdom) की प्रथा लगभग समाप्त हो गई । अब ग्रामों से अनेक किसान शहर की ओर चले गये ।

2 **खेतों की बाड़ बंदी:** इग्लैण्ड में तथा कुछ समय बाद फ्रांस व जर्मनी के कुछ भागों में छोटे-छोटे खेतों को मिला कर बड़े खेत (farms) बनाये गये । इससे अनेक गरीब किसान भूमिहीन हो गये तथा रोजगार की तलाश में नगरों में आये ।

3 **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विकास:** वाल बैक व टेलर के अनुसार पन्द्रहवीं सदी में इग्लैण्ड एक महत्वहीन व्यापारिक राष्ट्र था । लेकिन सोलहवीं सदी में इंगलैण्ड का व्यापार बढ़ने लगा । इसी समय में पश्चिमी यूरोप के कुछ देशों का व्यापार भी बढ़ा । अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के केन्द्र आन्तरिक भागों के नगर थे जहां बाहर जाने वाला माल इकट्ठा किया जाता था । लेकिन इनसे भी अधिक हलचल उन बन्दरगाहों पर होती थी जहां से जहाज बाहर जाते थे । अतएव ऐसे स्थानों पर रोजगार के लिये गाँवों से काफी मनुष्य आकर बसे ।

4 **औद्योगिक विकास :** इंगलैण्ड में औद्यौगिक क्रांति के समय कारखानों को बड़ी मात्रा में मजदूरों की आवश्यकता हुई । गांवों से भूमिहीन कृषक, कारीगर, श्रमिक व बेकार व्यक्ति शहरों के कारखानों में काम करने आये ।

8.6 नये नगरों का स्वरूप

प्राचीन नगरों की चार दीवारी के बाहर भी मनुष्य मकान बना कर रहने लगे । धीर-धीरे अनेक नगरों में सुरक्षा की ये प्राचीरें तोड़ दी गई ।

औद्योगिक विकास की गति में तेजी के फलस्वरूप जिन नगरों की आबादी बढ़ रही थी वे नगर आस पास के देहातों तक फैल गये । यहां तक कि ऐसे देहाती क्षेत्र नगरों के समूह बने गये । ऐसे स्थानों में नगरों तथा ग्रामों के मध्य का अन्तर लगभग समाप्त हो गया । इस प्रकार का परिवर्तन इंगलैण्ड तथा जर्मनी औद्योगिक प्रदेशों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता था।

कुछ स्थानों पर गांवों ने नगरों का रूप धारण कर लिया क्योंकि इन स्थानों पर व्यापार अथवा उद्योगों के केन्द्र खुल गये थे । इंगलैण्ड में इस प्रकार की प्रक्रिया का प्रभाव सबसे अधिक हुआ ।

इंगलैण्ड में राजधानी के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी नगरों का विकास हुआ लेकिन यूरोप में राज्यों की राजधानियों की आबादी ही विशेष रूप से बढ़ी ।

8.7 परिणाम:

1 **मध्यम वर्ग का उदय** : नगरीकरण के विस्तार के युग का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम इन नगरों में मध्यम वर्ग का उदय था । लेंगर ने लिखा है कि नागरिक जीवन से नवोदित मध्यम वर्ग का सबसे घनिष्ठ सम्बन्ध था । यह कहना कठिन है कि इस बुर्जोय (Burgeoise) वर्ग में किस प्रकार के व्यक्ति सम्मिलित थे । केवल यही कहा जा सकता है कि आम तौर पर मध्यम वर्ग के सदस्य गैर कृषि कार्यों तथा कुशल कारीगरी के कार्यों के अतिरिक्त अन्य कार्यों से प्राप्त आमदनी से अपनी जीविका चलाते थे । उनके पास न तो कृषि के लिये काफी भूमि होती थी और न ही वे श्रमिक बन कर कमा सकते थे ।

माध्यम वर्ग को भी उच्च व निम्न श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है । उच्च वर्ग में बड़े व्यापार, उद्योगपति, बैंकर धनी निवेषक और अच्छी आय वाले व्यवसायों में काम करने वाले व्यक्ति थे । निम्न मध्यम वर्ग के सदस्य उच्च वर्ग तथा मध्यम वर्ग की उच्च श्रेणी के व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूरी करते थे । इनमें दुकानदार, कुशल कारीगर, बैकों, सरकारी दफ्तरों, औद्योगिक व व्यापारिक प्रतिष्ठानों में काम करते थे । वकीलों, कलाकारों व बुद्धिजीवियों को भी इसमें सम्मिलित किया जा सकता है ।

इस मध्यम वर्ग ने यूरोप के प्रत्येक देश की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । यद्यपि उच्च मध्यम वर्ग के सदस्य संतोष पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे लेकिन निम्न मध्यम वर्ग को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था ।

2 **श्रमिकों का दुखमय जीवन** : यूरोप के नगरों के औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा कृषि फार्मों में एक बड़ी संख्या में श्रमिकों को नौकरी दी गई । फैक्टरियों में काम करने वाले मजदूरों की दशा अत्यन्त शोचनीय थी । उनके रहने की उचित व्यवस्था नहीं की गई थी । वे तंग गलियों और बिना हवादार मकानों में रहते थे । इससे उनके तथा उनके परिवार के सदस्यों पर बुरा असर पड़ता था । शहरों में काम करने वाले अन्य अकुशल श्रमिकों की दशा भी खराब थी ।

3 **नगरों का बेतरतीब विकास** : लगभग यूरोप के सभी नगरों का विकास बिना किसी योजना के हुआ । पहले से ही नगरों में तंग गलियाँ व कम चौड़ी सड़कें थी । अब ये बढ़ती हुई आबादी के लिए कठिनईयों पैदा करने लगी । शहर की चारदीवारी के बाहर भी मकानों का निर्माण बेतरतीब ढंग से हुआ । स्थानीय संस्थाएं उन पर कोई नियन्त्रण नहीं रख सकी ।

4 **स्वास्थ्य पर बुरा असर** : यह पहले बताया जा चुका है, कि मध्यकाल के आरम्भ के नगरों में पानी के निकास की समुचित व्यवस्था नहीं थी तथा शहरों में गंदगी रहती थी । इससे नागरिकों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता था । पुराने नगरों के विकास तथा नये नगरों की स्थापना के समय इस समस्या पर ध्यान नहीं दिया गया । समय के साथ साथ यह समस्या गम्भीर होती चली गई । अनेक गन्दी बस्तियाँ (Slums) बनी । फलस्वरूप मनुष्य विभिन्न बीमारियों से ग्रस्त होने लगे ।

5 **अपराधों की संख्या में वृद्धि :** शहरी बेरोजगारी की संख्या धीरे धीरे बढ़ती गई । इसने शहरों में रहने वाले मनुष्यों में अपराध की प्रवृति को जन्म दिया अथवा उसको उकसाया ।

6 **मानसिक तनाव :** ग्रामों की अपेक्षा शहर का जीवन अधिक तनाव पूर्ण होता है । एक नागरिक अपनी जरूरतों को पूरी करने में स्वयं को असमर्थ पाता है और मानसिक तनाव का शिकार हो जाता है।

लेकिन शहरों के उत्थान व विकास के अनेक लाभ भी थे ।

1 **बुद्धिजीवी वर्ग का विकास** : ग्रामों की अपेक्षा शहरों में रहने वाले बुद्धिजीवियों की संख्या अधिक थी । ये बुद्धिजीवी आपस में मिलते भी रहते थे । फलस्वरूप नगरों में साहित्य व कला का विकास हुआ ।

2 **वैज्ञानिक प्रगति :** यूरोप के नगरों में वैज्ञानिक अनुसंधान के केन्द्र खोले गये । इसमें अनुसंधान की सुविधाएं उपलब्ध कराई गई । इससे वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रगति हुई ।

3 **सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों के केन्द्र :** यूरोप के सभी नगर सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक क्रांति के केन्द्र बन गये । वहां पर इन क्षेत्रों में काफी हलचल होती रहती थी तथा वे मिल कर किसी भी अन्याय का विरोध करने के लिये शीघ्र संगठित हो जाते थे ।

शहरों और ग्रामों की सम्यता में अन्तर अभी तक विद्यमान है । गांव के निवासी शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं लेकिन शहरों के निवासियों का जीवन बाह्य आडंबर व तड़क भड़क से परिपूर्ण होता है । अतएव शहरों में रहने वाला सदैव किसी न किसी प्रकार के तनाव से ग्रस्त रहता है । शहरों के कोलाहल पूर्ण जीवन में उसे शांति नहीं मिलती । लेकिन वह इस जीवन का अभ्यस्त हो जाता है ।

8.8 सारांश:

इस इकाई में आपने यूरोप के प्राचीन काल के नगरों की स्थिति का अध्ययन किया तथा व्यापारिक संगठनों व कम्यूनों द्वारा सामन्तों से अधिकार पत्र (बईतजमत) प्राप्त करने के बारे में जानकारी प्राप्त की । उस समय के नगरों की आबादी व बनावट के सम्बन्ध में यह मालूम हुआ कि वे बेतरतीब बने थे तथा उनकी आबादी पाँच हजार से एक लाख तक थी ।

यूरोप की कुल जनसंख्या में से अधिकांश ग्रामों में ही रहती थी । लेकिन 1300 से 1600 ई0 के मध्य शहरों की आबादी बढ़ी । इसका मुख्य कारण सभी स्थानों पर जनसंख्या में वृद्धि थी । इसके साथ यह भी जाना कि इसके क्या कारण थे । ग्रामों से नगरों की ओर काफी संख्या में व्यक्तियों के पलायन से नगरों की जनसंख्या बढ़ी । 1851 के बाद विभिन्न नगरों की आबादी के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि उस समय एक लाख से अधिक आबादी वाले शहरों की संख्या 25 थी । नये नगरों के स्वरूप के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि इग्लैण्ड व शेष यूरोप के नगरों की स्थिति व विकास में अन्तर था । नागरिक जीवन के लाभों और हानियों के बारे में अध्ययन करने से यह मालूम होता है कि ग्रामवासियों की अपेक्षा शहरी जीवन अधिक तनावपूर्ण होता है।

8.9 बोध प्रश्न:

1. ग्रामों से नगरों की ओर पलायन के क्या कारण थे ?
2. यूरोप के नगरों में मनुष्यों को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा ?
3. यूरोप की जनसंख्या में वृद्धि के कारणों का विश्लेषण दीजिए । चौदहवीं सदी से यूरोप के देशों में इसने नगरीकरण को किस प्रकार से प्रभावित किया ?

8.10 संदर्भ ग्रन्थ:

1. Chapter by R.R. Enfield in the book 'European Civilization - Its origin and Development', Volume V under the direction of Edward Eyre. Oxford University Press, London, 1937.
2. Chapter by R.M. Hartwell in the book ' The Cambridge Modern History Volume IX (1793-1830) edited by C.W. Cramley, Cambridge University Press, London, 1965.
3. Brison D. Gooch: Europe in the Nineteenth Century, the Macmillan Company, London, 1970.
4. David Ogg : Europe in the Seventeenth Century, Hindi edition, Jaipur, 1967.
5. Carlton J.H. Hayes: Modern Europe to 1870, The Macmillan Company, New York, Sixth Print, 1960.
6. Langer, Eadie, Geanakoplos, Hexter, Pipes: Western Civilization, Volume II, Harper and Row, New York, Second Edition, 1975.
7. Wallbank and Taylor: Civilization - Past and Present, Volume II, Third Edition, 1975.

इकाई-9:
कारखाना और श्रमजीवी वर्ग

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 फैक्टरी सिस्टम

9.1.1 फैक्टरी क्या है?

9.1.2 फैक्टरी सिस्टम कैसे शुरू हुआ ?

9.1.3 एक काल्पनिक फैक्ट्री का कार्य विन्यास

9.2 फैक्ट्री सिस्टम एवम् औद्योगिक क्रांति

9.3 फैक्ट्री सिस्टम का सामाजिक असर

9.4 बुराइयां

9.5 बुराइयों को दूर करने के प्रयास एवम् समाधान

9.5.1 संसदीय प्रयास

9.5.2 समाज सुधार और अंबधनीति

9.5.3 सुधारक यत्न जारी रहे

9.5.4 सैडलर के प्रयत्न

9.5.5 एशले का कानून

9.6 समाज और सामाजिक परिवर्तन

9.7 सारांश

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.8.1 अंशों पर छोटे सवाल

9.8.2 सारी इकाई पर सवाल

9.9 प्रासंगिक पठनीय ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

लगभग 1750 से लेकर 1850 तक के काल को पश्चिम यूरोप में औद्योगिक क्रांति का काल माना जाता है । अन्य इकाइयों में तुमने औद्योगिक क्रांति के बारे में विस्तार से पढ़ा होगा । अन्य बातों के अलावा, औद्योगिक क्रांति का संबंध उत्पादन के लिए एक नए सामाजिक विन्यास को नाम दिया गया "फैक्ट्री सिस्टम" । फैक्ट्री सिस्टम में काम करने के लिए समाज में एक नए श्रमजीवी वर्ग का जन्म हुआ । इस इकाई में हम फैक्ट्री सिस्टम और इसमें काम करने वाले श्रमजीवी वर्ग के बारे 'में जानेंगे ।

9.1 फैक्ट्री सिस्टम

9.1.1 फैक्ट्री क्या है?

औद्योगिक क्रांति से शुरूआत के भी पहले की बात है । किसी तिजारत करने वाली कंपनी के नुमाइंदे को "फैक्टर" बुलाया जाता था । उसके दफ्तर को "फैक्ट्री" । फैक्ट्री से कंपनी खरीद-फरोख्त करती । मसलन हम अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कंपनी को लें । जब कंपनी सत्रहवीं सदी में भारत आई तो उसने गुजरात तट पर सूरत बंदरगाह में अपनी पहली प्रमुख फैक्ट्री स्थापित की । इस फैक्ट्री में कंपनी अपना व्यापार का सामान रखती और हिन्दुस्तानियों के साथ खरीद-फरोख्त करती । ख्याल रखने वाली बात यह है कि ईस्ट इण्डिया कंपनी एक तिजारती कंपनी थी और उसका उत्पादन से, चाहे वह औद्योगिक हो या फिर गैर औद्योगिक, कोई सीधा सरोकार न था ।

जैसे-जैसे अठारहवीं सदी में, औद्योगिक क्रांति का विस्तार हुआ वैसे-वैसे फैक्ट्री शब्द का प्रचलित अर्थ भी बदलता गया । अब फैक्ट्री का अर्थ उस स्थान से हुआ जहाँ कि मशीनों के द्वारा कारीगर काफी मात्रा में चीजों को बनाते । यही अर्थ आज तक साधारण बोलचाल की भाषा में प्रचलित है । सो जिस कारखाने में हवाई जहाज बनता है वह भी फैक्ट्री कहलाता है और जिसमें कपड़े बनते हैं वह भी । हालांकि "फैक्ट्री" केवल चीजें बनाने वाले कारखाने को कहा जाता था । फैक्ट्री जैसी उत्पादन व्यवस्था और कर्म विन्यास उद्योगों में भी प्रयुक्त होती थी, जैसे कि कोयला खदानें ।

इस इकाई में हम मुख्यतः औद्योगिक क्रांति के पहले चरण पर गौर करेंगे । इस चरण (1750-1850) में फैक्टरियाँ ज्यादातर सूत कातने की, कपड़ा बुनने की, और लोहे का काम करने वाली होती थीं ।

9.1.2 फैक्ट्री सिस्टम कैसे शुरू हुआ?

पूंजीवादी व्यवस्था के शुरूआत के दिनों में पश्चिमी यूरोप में उत्पादन मुख्यतः "पुटिंग आउट" सिस्टम पर निर्भर करता था । इस व्यवस्था में पूंजी का मालिक व्यापारी कारीगरों को कच्चा माल खरीद कर देता, कारीगर अपने-अपने घरों पर अपनी ही मशीनों से चीजें बनाते जिन्हें कि व्यापारी इकट्ठा कर के बाजार में बेचता । इस व्यवस्था में फायदा यह था कि व्यापारी दूर-दूर तक फैले कारीगरों से काम करवा सकता था और उसे अपने कारीगरों के रहने खाने की व्यवस्था भी नहीं करनी पड़ती ।

पर इस व्यवस्था में नुकसान कई थे । एक तो व्यापारी को अपने कारीगरों तक पहुंचने में और उनसे बना हुआ माल लेने में काफी समय बर्बाद करना पड़ता । दूसरे, काम की क्वालिटी बरकरार रखना मुश्किल था । तीसरे, कारीगर से समय पर काम करवाने में दिक्कत होती थी ।

इन मुश्किलों से पार पाने का एक तरीका था । वह यह कि सारे कारीगरों को एक ही कारखाने में इकट्ठा कर लिया जाए । पर ऐसा करने पर व्यापारी को कारखाने की इमारतें बनाने

में पैसा लगाना पड़ता, मशीनें खरीदनी पड़ती, और फोरमैनों और सुपरवाइजरों को नौकरी पर लगाना पड़ता । अर्थात् व्यापारी का उपरला खर्च काफी बढ़ जाता ।

पर जब 1700 ई0 में स्वीडन के व्यापारी क्रिस्टोफर पोलहेम ने 100 कारीगरों वाली एक बर्तन-भांडे की फैक्टरी स्थापित की तो उसने पाया कि उत्पादन पर कुल खर्च इतना कम हो जा रहा था कि उपरला खर्च बढ़ने के बावजूद वह अच्छा खासा मुनाफा कमा लेता ।

9.1.3 एक काल्पनिक फैक्टरी का कार्य विन्यास

एडम स्मिथ अपनी किताब द वेल्थ ऑफ नेशन्स (1776) में एक साधारण पिन बनाने वाली फैक्टरी का वर्णन करता है । जब पिन घरेलू उद्योगों में बनाए जाते थे तो एक या दो व्यक्ति ही पिन बनाने में लगते थे । पर फैक्टरी में पिन बनाने की प्रक्रिया को कई हिस्सों में बांट दिया गया । एक आदमी तार खींचता, दूसरा उसे सीधा करता, तीसरा काटता, चौथा उसके एक सिरे को नुकीला करता, पांचवां उसके दूसरे सिरे को घिसता, वगैरह । इस तरह तार खींचने से लेकर बने हुए पिन को कागज की पुड़िया में पैक करने तक एडम स्मिथ ने कोई 32 चरण गिने । इनमें से किसी भी चरण पर हुनरमंद कारीगर की जरूरत नहीं थी । एक बच्चा भी इनमें से किसी एक चरण को बखूबी पूरा कर सकता था । यह फैक्ट्री सिस्टम की प्रमुख विशिष्टता थी ।

फैक्टरी में उत्पादन की प्रक्रिया को बहुत ही सरल छोटे-छोटे हिस्सों में बांट दिया गया । हर चरण को एक साधारण अकुशल श्रमिक भी आसानी से पूरा कर सकता था । यानि कि अब कारखाने की उत्पादन-क्षमता किसी व्यक्ति विशेष की दक्षता पर निर्भर नहीं करती थी बल्कि सारे कारखाने के आर्गनाइजेशन पर जिसे कि एक मैनेजर आसानी से कंट्रोल कर सकता था । फिर चूंकि दक्ष कारीगरों की जरूरत नहीं थी तो फैक्टरियों में स्त्रियों और बच्चों को आसानी से श्रमिकों के तौर पर इस्तेमाल किया जा सकता था और हालांकि स्त्रियां और बच्चे एक पुरुष जितना ही उत्पादन करते । उनकी तनख्वाह आदमियों की तुलना में कहीं कम रहती । इस सब से फैक्टरी के मालिक को काफी मुनाफा होता ।

9.2 फैक्ट्री सिस्टम एवम् औद्योगिक क्रांति

इतिहासकार होक्सबाम का कहना है कि वैसे तो सत्रहवीं सदी से ही उत्पादन प्रक्रिया में अनेक प्रकार के यांत्रिक सुधार होने शुरू हो गए थे । पर सिर्फ यांत्रिक सुधार ही औद्योगिक क्रांति नहीं ला सके । औद्योगिक क्रांति के लिए जरूरी था कि उत्पादन इतना ज्यादा और इतना सस्ता हो कि बाजार में आप से आप इस उत्पाद के लिए मांग बढ़े । ऐसा तब ही हो सका जब यांत्रिक सुधारों के साथ उत्पादन के लिए एक नए कर्म विन्यास का इस्तेमाल किया गया । जब उत्पादन की प्रक्रिया से संबंधित डिवीजन आफ लेबर को (काम के बंटवारे) को काफी जटिल बना दिया गया । उत्पादन की प्रक्रिया को कई छोटे-छोटे टुकड़ों में बांट दिया गया और एक मजदूर के जिम्मे केवल एक ही हिस्सा रखा । यही फैक्ट्री सिस्टम की प्रमुख विशिष्टता थी ।

9.3 फैक्टरी सिस्टम का सामाजिक असर

मुनाफा बढ़ाने के लिए यह जरूरी था कि फैक्ट्री में लगी मशीनों का ज्यादा से ज्यादा उपयोग किया जा सकें । फैक्ट्री मालिकों की चेष्टा यह रहती थी कि अपने कारीगरों से तब तक लगातार काम करवाते रहें जब तक की मशीन ही जवाब न दे जाए । इसका मतलब यह था कि कामगारों को काम करने के तरीके का एक नया अनुशासन सीखना पड़ा ।

इतिहासकार ई.पी. हामपूसन का मानना है कि जिस लय से मशीन चलती है उसी लय से श्रमिकों को चलना सीखना पड़ा । समय की पाबंदी सीखनी पड़ी कि एक निश्चित समय पर काम पर आए और एक निश्चित समय पर काम से हटें । एक ही स्थान पर खड़े होकर लगातार एक ही यांत्रिक काम को लगातार करते रहने की आदत डालनी पड़ी । यदि किसी के जिम्मे पिन का तार घिसना था तो वह लगातार, दिनभर, केवल तार' ही घिस सकता था । जिस व्यक्ति को तार सीधा करने का काम दिया गया दिनभर एक ही स्थान पर खड़े रहकर केवल तार ही सीधा करता रहता ।

जैसे-जैसे समय बीतता गया इस पूरे सिस्टम के दुर्गुण भी सामने आते गए । सबसे पहले जो बात सामने आई वह यह है कि फैक्ट्री में लगातार, एक ही जगह पर, कठपुतली की तरह काम करते रहना काफी उबाऊ था । श्रमिक थोड़े ही समय में इस तरह के काम से जी चुराने लगते । जब फैक्ट्री का मालिक उनसे जबरदस्ती काम करवाता तो जाहिरा तौर पर काम करने वालों को यह बात अखरती और उन्हें खट्टे दिल से काम पर लगे रहना पड़ता ।

जहाँ तक काम करने की परिस्थितियों का सवाल है, कुछ बातें साफ हैं । एक तो यह कि यह कहना मुश्किल है कि फैक्ट्री में काम करने वालों की परिस्थिति दूसरे श्रमिकों की परिस्थिति से बेहतर थी या बदतर । ऐसा इसलिए कि इतिहासकारों के पास औद्योगिक क्रांति से पहले के काल के श्रमिकों के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है । हाँ, यह जरूर पता है कि तेरहवीं सदी से ही उत्तर यूरोप में पगार पाने वाले मजदूर हुआ करते थे और उनकी हालत अन्य मजदूरों की हालत से खराब नहीं थी । वैसे भी सत्रहवीं-अठारहवीं सदी में, कम से कम इग्लैण्ड में, पुटिंग आउट सिस्टम के तहत काम करने वाले बहुत सारे मजदूर पगार की एवज में ही काम किया करते थे । कहने का मतलब यह है कि फैक्ट्री मजदूर का तनख्वाह मजदूर होना समाज के लिए कोई नहीं बात नहीं थी ।

9.4 बुराइयाँ

जो नई बात थी वह यह कि जब फैक्ट्रीयाँ बनीं तो एक साथ बहुत सारे मजदूर शहरों में इकट्ठा हुए । इस जमाव में उनकी दुर्दशा भी समाज के सामने कहीं ज्यादा प्रखर रूप से उजागर हुई ।

उद्योगों में बच्चों और औरतों को सोलह घण्टे या उससे भी ज्यादा काम करवाया जाता । थकान के कारण यदि कोई काम नहीं कर पाता तो उसे बेल्ट से पीटा जाता था तनख्वाह काट ली जाती । तनख्वाह वैसे भी काफी कम मिलती थी। एक हफ्ते के लिए किसी हुनरमंद कारीगर को 1795 में कोई 25 शिलिंग, और साधारण मजदूर को सिर्फ 12 शिलिंग मिला

करते थे । महिलाओं को पुरुषों से आधी, और बच्चों को एक चौथाई तनख्वाह ही मिलती । हालांकि वे पुरुषों जितना ही काम करते।

कोयले की खदानों में तो स्थिति और भी ज्यादा खराब थी । यहाँ चार से पाँच साल के बच्चों को खदान की सुरंग के अंदर बारह से सोलह घंटे काम करवाया जाता । इनकी औसत पगार दो से तीन शिलिंग प्रति सप्ताह थी ।

फैक्ट्री सिस्टम के आने से मजदूरों की गरीबी भी बहुत ज्यादा उजागर होने लगी । वैसे तो औद्योगिक क्रांति के शुरू के सालों में ही यह साफ हो गया था कि समाज में निरीह गरीबों की संख्या बढ़ रही है । पर इस स्थिति से बचने के लिए कुछ खास नहीं किया गया । स्पीनहेमलैण्ड नामक कस्बे में गरीबों की मदद के लिए एक सिस्टम जरूर शुरू किया गया जिसे स्पीनहेमलैण्ड सिस्टम के नाम से जाना जाता था । कुछ दूसरे कस्बों ने भी इस सिस्टम को अपनाया । पर बढ़ती हुई औद्योगिक गरीबी के सामने यह सिस्टम पस्त हो गया ।

शहरों में स्थिति कुछ ऐसी थी कि मजदूरों की हालत बद से बदतर होती चली गई । शहर बगैर किसी योजना के बेतहाशा बढ़ते चले गए । उनकी नगरपालिकाएं इस नई आबादी की देखभाल करने में असमर्थ रहीं । शहरों में गंदी, दरिद्र बस्तियां पनपने लगीं, जिन्हें अंग्रेजी में स्लम कहते हैं । जहाँ अब तक शहरों में अनेक तबकों के लोग आपस में मिल कर रहते थे, वहाँ धीरे-धीरे मजदूर बस्तियां शहर की बाँकी आबादी से हट कर रहने लगी । इन बस्तियों में न तो सडकें ठीक होती, न ही नालियां न ही कूड़ा निकालने की कोई व्यवस्था, न ही पेय जल का इंतजाम, और न ही ठीक से बने हुए मकान । इतिहासकार होब्सबाम का कहना है कि यूरोप के शहरों में इस किस्म की बस्तियां ज्यादातर शहर के पूर्वी हिस्सों में बसीं । सो शहरों में एक नया भेद शुरू हो गया, ईस्ट एण्ड निवासी (गरीब) और वेस्ट एण्ड निवासी (अभिजात्य) का ।

रह-रहकर औद्योगिक शहरों में महामारियां भी बढ़ने लगीं । ग्लासगों में पहली बार 1818 ई0 में हाइफस जवर का प्रकोप फैला । यूरोप के सारे औद्योगिक शहरों में 1831 ई0 और 1832 ई0 में टाइफाइड़ की महामारी छाई रही । इन शहरों में कालेरा, मियादी बुखार, और तपेदिक का भी बोलबाला रहा । ये सारी बीमारियां ज्यादातर मजदूर बस्तियों में ही रहीं, मानो यह साबित कर रही हों कि जहां दरिद्रता और गंदगी है वहां बीमारियां भी रहेंगी । इस सबने मजदूर बस्तियों के निवासियों का हौसला तोड़ दिया । सामाजिक हौसलापस्ती के कई लक्षण सामने आने लगे । शराब का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल होने लगा । बाल हत्या, वैश्यावृति, आत्महत्या, और मानसिक विक्षप्ता की घटनाएं बढ़ने लगी । मजदूरों की दुर्गति इस बात से और भी ज्यादा उजागर हुई कि औद्योगिक क्रांति के कारण समाज के बाकी सारे वर्गों की सम्पन्नता बढ़ रही थी ।

9.5 बुराइयों को दूर करने के प्रयास एवम् समाधान

फैक्टरी सिस्टम की इन बुराइयों को जल्द से जल्द दूर करना बड़ा जरूरी था क्योंकि एक तो साधारण मानवीयता का तकाजा था कि मजदूरों के काम करने के हालात में सुधार आए । इससे भी ज्यादा बड़ा कारण यह था कि फैक्ट्रियों में अधिकांश उत्पाद फैक्ट्री में काम करने वाले मजदूर ही खरीदते थे । इसलिए अगर मजदूरों की माली हालत एक सीमा से नीचे जाती

तो नुकसान पूंजीपतियों को ही होता और अगर मजदूर बस्तियों की समाज व्यवस्था को ठप्प होने दिया जाता तो डर था कि कहीं देश में विद्रोह न भड़क उठे । विद्रोह न भी होता तो यह तो साफ था कि मध्यवर्ग के जवान इन बस्तियों में फैल रही शराबखोरी, वैश्यावृति और अन्य प्रकार की अनैतिकता के चक्कर में पड़ रहे थे । यदि मध्यवर्ग को अनैतिकता से बचाना था तो जरूरी था कि मजदूर वर्ग से अनैतिकता को दूर किया जाए ।

9.5.1 संसदीय प्रयास

आजकल यह माना जाता है कि यदि फैक्ट्री मालिक अपने मजदूरों की भली प्रकार देखभाल करें तो उन्हें ही ज्यादा मुनाफा होता है । पर उन्नीसवीं सदीं में यह बात अधिकांश पूंजीपतियों की समझ में नहीं आ रही थी । इसलिए हम पाते हैं कि फैक्टरी में मजदूरों की स्थिति सुधारने वाले अधिकांश उपाय केवल कुछ फैक्टरी मालिकों की पहल पर, राज्य व्यवस्था द्वारा, विभिन्न देशों की संसदों द्वारा किए गए । सबसे ज्यादा सुधार का काम इंगलैण्ड में हुआ ।

ऐसे उपायों में से पहला था इंगलैण्ड में राबर्ट पील द्वारा संसद में पास किया गया हेल्थ एण्ड मारटज एक्ट (1802) । यह एक्ट केवल बड़ी फैक्टरियों पर लागू होता था और केवल एपरेन्टिसों पर । इस एक्ट में यह कहा गया कि नौ साल से कम उम्र के बच्चे बतौर एपरेन्टिस नहीं लगाए जा सकते । फैक्ट्री मालिकों पर इन बच्चों से बारह घण्टे से ज्यादा या फिर रात में काम करवाने पर रोक लगा दी गई ।

1802 के एक्ट में कई खामियां थी । एक तो यह केवल बड़ी फैक्ट्रीयों पर लागू होता था और वहाँ भी केवल उन फैक्ट्रियों पर जो कि एपरेंटिसों को इस्तेमाल करती थी । बेहुनर बाल मजदूरों को इस एक्ट से कोई सुरक्षा नहीं मिलती थी । सबसे मुख्य बात तो यह थी कि इस एक्ट में निरीक्षण करने का कोई प्रावधान न था । नतीजतन यह एक्ट महज कागजी कानून बन कर रह गया ।

फिर 1816 में पील की चेयरमेनी में एक संसदीय कमेटी का गठन किया गया । इस कमेटी की सलाह पर 1819 का फैक्ट्री नियंत्रण कानून पास किया गया । इस कानून में पिछले कानून के प्रावधानों को दोहराया गया और कहा गया कि सारे बाल मजदूरों को इस कानून की सुरक्षा दी जाएगी । साथ ही यह निर्धारित किया गया कि सोलह साल से कम उम्र के मजदूरों को बारह घण्टे के दिन में डेढ़ घण्टे की खाने की छुट्टी दी जायेगी । चूँकि यह एक्ट सारे कामकाजी बच्चों पर लागू होता था इसलिए लोगों ने इसका डट कर विरोध किया । विरोधियों में एक बड़ा तबका उन मां-बाप का था जो अपने बच्चों से काम करवाते थे।

9.5.2 समाज सुधार और अबंधनीति

तुमने अबंधनीति के बारे में पढ़ा होगा । यह नीति अठारहवीं सदी के अंतिम दशकों में काफी फैल चुकी थी । अर्थशास्त्री एडम स्मिथ, जिसका हम पहले जिक्र कर चुके हैं, इसका एक बड़ा समर्थक था । इस नीति के मतावलंबियों का मानना था कि समाज की अर्थव्यवस्था तब ही

सफल हो सकती है जबकि सरकार अर्थव्यवस्था को अपने आप पर छोड दें, उसमें अपनी टांग न अड़ाए ।

जब उन्नीसवीं सदी में संसदीय प्रयत्न मजदूरों के सुधार के लिए होने लगे तो सुधार-विरोधी उद्योगपतियों ने अबंधनीति की दुहाई देते हुए यह गुहार लगाई कि अगर राज्य फैक्ट्री सिस्टम को सुधारने व नियंत्रित करने की कोशिश करेगा तो सारी अर्थव्यवस्था ही ठप्प हो जाएगी । दरअसल बड़े-बड़े दार्शनिक विचारों की आड़ में ये विरोधी केवल इतना कह रहे थे कि उन्हें मजदूरों-बच्चे, महिलाओं, और पुरूषों का खून चूसने से नहीं रोका जाना चाहिए भले ही ऐसा करते हुए वे समाज की इतनी दुर्गति क्यों न कर दें जिससे कि समाज का साधारण चाल-चलन ही ठप्प हो जाए । ऐसे विरोधियों को उनकी खुद की बेवकूफी से बचाना जरूरी था ।

9.5.3 सुधारक यत्न जारी रहे

1820 के दशक में पावर लूम और भाप के इंजन में काफी ज्यादा यांत्रिक सुधार आए । इसका नतीजा यह हुआ कि इस दशक में धीरे-धीरे फैक्ट्री सिस्टम, सारे कपड़ा उद्योग और खनिज उत्पादन पर छा गया । फैक्ट्रियां भी केवल कुछ शहरी इलाकों में केंन्द्रित होने लगी । लंकाशायर का कपड़ा उद्योग इसका अच्छा उदाहरण है । यहाँ कोई 25 वर्ग मील के क्षेत्र में इतनी ज्यादा कपड़ा मिलें थीं कि इग्लैण्ड का 80 प्रतिशत से ज्यादा कपड़ा बनाया जाता था । जितना फैक्टरियों का जमाव बढ़ा, उतना ही उनके दुर्गुण प्रकट हुए । इसमें सुधार लाने के संसदीय प्रयास भी उतने ही जोरों से किए जाने लगे ।

9.5.4 सैड़लर के प्रयास

माइकेल सैड़लर ने 1831 में टेन-आवर बिल इग्लैण्ड की संसद में पेश किया । इस बिल में यह प्रावधान था कि किसी भी मजदूर से दस घंटे (टेन-आवर) से ज्यादा काम नहीं लिया जा सकेगा । यह बिल संसद में पास नहीं हो सका ।

पर इन दिनों इग्लैण्ड में वेस्ट इण्डीज की दास प्रथा को लेकर काफी गहमा-गहमी चल रही थी । इसके रहते अखबारों और पत्रिकाओं में फैक्टरी मजदूर की तुलना वेस्ट-इण्डीज के नीग्रो दासों से की जाने लगी । धीरे-धीरे यह मत फैलने लगा कि मजदूरों की स्थिति में सुधार के लिए कुछ ठोस कदम उठाए जाने चाहिए । इसके फलस्वरूप जब 1833 में लार्ड एशले ने संसद में अपना प्रस्ताव रखा तो वह कुछ संसदीय छीना-झपटी के बाद पारित हो गया ।

9.5.5 एशले का कानून

लार्ड एशले के कानून (1833) को सारी कपड़ा बुनने की फैक्ट्रियों पर लागू किया गया । इसके अनुसार नौ साल से कम उम्र के बच्चों को फैक्ट्री में काम करवाने पर पाबंदी लगा दी गई । तेरह साल से कम उम्र के मजदूरों से दिन में नौ घण्टे और सप्ताह में 40 घण्टे से ज्यादा काम करवाना प्रतिबंधित किया गया । उन्हें रोज डेढ़ घण्टे की खाने की छुट्टी देना जरूरी रखा गया । यह कहा गया कि अठारह साल से कम उम्र के मजदूरों से दिन में 12 घंटे और सप्ताह में 69 घंटे से ज्यादा काम नहीं करवाया जा सकता । "रात" के काम को ठीक तरह से

परिभाषित किया गया । साढ़े आठ बजे शाम से लेकर साढ़े पांच बजे सुबह तक के समय को "रात" करार दिया गया और इस पारी में केवल अट्ठारह साल से ज्यादा उम्र के मजदूरों के प्रयोग की अनुमति दी गई । फैक्ट्री में काम करने वाले हर बच्चे का रोज दो घंटे स्कूल जाना निश्चित किया गया । निरीक्षकों की एक बड़ी टोली नियुक्त की गई जो फैक्ट्री मालिकों पर निगरानी रख सके । और जो मालिक कानून की अवहेलना करते हुए पकड़े जाएं, उन के सिर बड़ी सजा का प्रावधान रखा गया ।

इस कानून में दो मुख्य खामियां थी । एक तो यह केवल कपड़ा उद्योग पर ही लागू किया गया जबकि अन्य उद्योगों में भी मजदूरों की हालत काफी खराब थी । दूसरे, यह केवल बच्चों को अपने दायरे में लेता था जबकि स्त्रियों और पुरुषों को भी कानूनी सुरक्षा की आवश्यकता थी ।

9.6 समाज और सामाजिक परिवर्तन

बहरहाल इस कानून से कुछ बातें साफ जाहिर होती थीं । सबसे पहली बात तो यह कि हालांकि समाज में अब भी अबंधनीति का बोलबाला था, अब सरकार की समझ में यह आने लगा कि समाज के कुछ अंश ऐसे होते हैं जहाँ कि सुधार लाने के लिए सरकारी हस्तक्षेप जरूरी होता है । दूसरी बात यह कि अब साधारण तौर पर यह माना जाने लगा कि समाज में औद्योगिक उत्पादन की इकाई परिवार नहीं बल्कि व्यक्ति विशेष था और उसकी सामाजिक सुरक्षा और सिखा-पढ़ी की जिम्मेदारी केवल परिवार पर ही नहीं छोड़ी जा सकती थी, समाज को भी आगे बढ़कर कुछ उपाय करना जरूरी था ।

धीरे-धीरे अन्य उद्योगों को भी फैक्ट्री कानून के तहत लाया गया । 1842 में लार्ड एशले के कानून को कोयला खदानों पर लागू किया गया और महिला मजदूरों को भी सुरक्षा दी जाने लगी । 1878 में इस कानन ने सारी फैक्ट्रियों और वर्कशापों को अपने दायरे में ले लिया । इस बीच दूसरे देशों में भी फैक्ट्री कानूनों की प्रक्रिया जारी थी । 1841 में फ्रांस में बाल-मजदूर कानून लागू किया गया । एशिया में भी 1870 तक कई कानून जारी किए गए, पर उन्हें कभी गंभीरता से लागू नहीं किया गया ।

1848 में सारे यूरोप में सोशलिस्ट विद्रोह हुए और उन्हें काफी आसानी से कुचल दिया गया । इन विद्रोहों में मजदूरों ने बढ़ कर हिस्सा लिया था । कुचले जाने के बाद इन विद्रोहों के बहुत सारे नेता मजदूर नेता बन गए और फैक्ट्री मालिकों से मजदूरों की भलाई के लिए मांग करने लगे । इस समय के बाद से फैक्ट्री मजदूरों के संगठन बनना शुरू हो गए और कर्मशाला के हालातों में सुधार के लिए ये संगठन अपने अपने उद्योगों और सरकारों पर जोर हालने लगे । ऐसा इन्होंने किस तरह किया तुम अन्य इकाइयों में पढ़ोगे ।

9.7 सारांश

इस इकाई में तुमने जाना कि फैक्ट्री सिस्टम अठारहवीं सदी में शुरू हुआ । इसने औद्योगिक उत्पादन में एक नए कर्म विन्यास को जन्म दिया । फैक्ट्रियाँ चलाने के लिए एक नए किस्म के अनुशासन की जरूरत थी जो कि पहले कभी संसार में देखने को नहीं मिला था । लगातार अनुशासन स्थापित रखने के लिए फैक्ट्री कर्मियों के उपर एक नए मैनेजमेंट तबके का

जन्म हुआ, फोरमैन और सुपरवाईजर । ये लोग लेबर अरिस्टोक्रेट्स (Labour aristocrates) कहलाए । इनके रहते उद्योगों में उद्योग की मिलकियत और उसके मैनेजमैंट में भेद किया जाने लगा । मजदूरों के शहरों में रहने से कई बुराइयां पनपीं । उन्हें दूर करने के लिए उन्नीसवीं सदी के मध्य तक अभिजात्य वर्गों से कुछ समाज सुधारक उबर कर सामने आए । पर मजदूरों के संगठन अभी ठीक तरह से नहीं पनप पाए थे । वे 1848 के यूरोपीय विद्रोहों के बाद उबरे ।

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(I) अंशों पर छोटे सवाल

कुछ शब्दों में जवाब दीजिए:

(क) क्या फैक्ट्री सिस्टम और औद्योगिक क्रांति में से कोई एक बगैर दूसरे के पनप सकता था?

(ख) फैक्ट्री सिस्टम की प्रमुख विशिष्टता क्या थी?

(ग) क्या पिन बनाने की फैक्ट्री वास्तव में एडम स्मिथ के वर्णन के अनुसार होती हैं?

(घ) क्या फैक्ट्री सिस्टम अनैतिक था?

(च) अबंधनीति फैक्ट्री मालिकों को क्यों पसंद थी?

(छ) इस इकाई में जिन फैक्ट्री सुधारकों का जिक्र है, उसके अलावा दो और सुधारकों के नाम बताइये ।

(II) सारी इकाई पर सवाल

दो सौ से तीन सौ शब्दों में जवाब दें:

(क) फैक्ट्री सिस्टम इग्लैण्ड में किस तरह पनपा?

(ख) फैक्ट्री सिस्टम ने किस तरह स्थापित आर्थिक और सामाजिक संस्थाओं पर प्रहार किया?

(ग) फैक्ट्री सिस्टम के कारण समाज में किस तरह के परिवर्तन आए ।

(घ) फैक्ट्री सिस्टम में सुधार लाने के प्रयत्नों की विवेचना करें ।

9.9 प्रासंगिक पठनीय ग्रन्थ

ई.जे. होब्सबाम - फ्राम इंडस्ट्री टू एम्पायर, पेन्गुइन

ई.जे. होब्सबाम - एज आफ रेवोल्यूशन, पेन्गुइन

ई.पी. टामप्सन - मेकिंग आफ द इंगलिश वर्किंग क्लास

(सभी किताबें अंग्रेजी में हैं बाजार में आसानी से मिल जाती है)

MAHI-01/ISBN13/978-81-8496-260-4